श्रीवीतरागाय नमः ।

जैनपदसंग्रह

प्रथमभाग ।

अर्थात्

स्वर्गीय कविवर दौलतरामजीके

१२५ पदोंका संग्रह ।



श्रीयुत पं० पन्नालालजी बाकलीवालाद्वारा सम्पादित

और

नाथूरामप्रेमीद्वारा संशोधित ।

जिसको

श्रीजैनग्रन्थरत्नाकर कार्यालयने

मुम्बईके

निर्णयसागरप्रेसमें वा. रा. घाणेकरके द्वारा

छपाकर प्रसिद्ध किया ।

श्रीवीरनिर्वाण संवत् २४३८ । जून सन् १९१२

चतुर्थवार] [मूल्य ३ आने ।

Published by Shri Nathuram Premi, Proprietor-Shri
Jain-Grantha-Ratnakar Karyalaya, Hirabag,
Near C P. Tank.—Bombay.



Printed by B. R, Ghanekar at the Nirnaya-sagar Press
No. 23, Kolbhat Lane, Kalbadevi Road, Bombay.

कविवर दौलतरामजी कृत

जैनपदसंग्रह.

प्रथम भाग।

दौलत पदसंग्रहकी वर्णानुक्रमणिका.



पृष्ठांक.		पदसंख्या.
	अ	
४१	अपनी सुधि भूल आप,	५८
७१	अब मन मेरा वे, .	१०९
७९	अब मोहि जानि परी	११६
१७	अरिरज रहस हनन, प्रभु,	२१
७०	अरे जिया, जग धोखेकी०	१०७
२८	अहो नमि जिनपनित नमत०	४२
	आ	
२७	आज गिरिराज निहारा	३९
२८	आज मैं परमपदारथ पायौ	४०
४२	आतम रूप अनूपम अद्भुत	६१
४३	आप भ्रम विनाश आप आप०	६२
४२	आपा नहिं जाना तूने ..	६०
	उ	
१५	उरग-सुरग-नरईश शीस	१७
	ऐ	
३६	ऐसा मोही क्यों न अधोगति	५२
३७	ऐसा योगी क्यों न अभय पद	५३
	औ	
४५	और अबै न कुदेव सुहावै	६५
४४	और सबै जग द्वन्द मिटावो	६४
	क	
४५	कबधों मिलै मोहि श्रीगुरु मु०	६६
१२	कुथुनके प्रतिपाल कुंथु जग	१३
४६	कुमति कुनारि नहीं है भली रे	६७

पृष्ठांक		पदसंख्या.
	ग	
४७	गुरु कहत सीख इमि वार वार	६८
	घ	
४७	घड़ि घड़ि पल पल छिन०	६९
	च	
१०	चन्द्रानन जिन चन्द्रनाथके	११
२७	चलि सखि देखन नाभि०	३८
५२	चित चिंतकै चिदेश कब	७७
५१	चिदराय गुन सुनो सुनो	७६
४८	चिन्मूरत दृग्धारी की मोहि	७०
५०	चेतन अब धरि सहज स०	७४
४९	चेतन कौन अनीति गही रे	७२
४९	चेतन तैं यौं ही भ्रम ठान्यो	७३
४८	चेतन यह बुधि कौन स०	७१
	छ	
५५	छाडत क्यों नहिं रे ...	८२
३५	छाडि दे या बुधि भोरी	५०
	ज	
८	जगदानन्द जिन अभिनन्दन	९
७	जबतैं आनंद-जननि दृष्टि परी	०७
५४	जम आन अचानक दाबैगा	८१
११	जय जिन वासुपुज्य शिव०	१२
१४	जय शिव-कामिनि कंत वीर	१५
१४	जय श्रीवीर जिनेन्द्रचन्द	१६
७१	जयवीर जिनवीर जिनवीर	१०८

पृष्ठांक.		पदसंख्या.
७९	जय जय जग-भरम तिमर	११५
८१	जय श्रीऋषभ जिनेन्द्रा	११९
८६	जाऊं कहा तज शरन तिहारे	१२५
६७	जानत क्यों नहिं रे हे नर०	१०२
४	जिनवर आनन भान निहारत	३
२६	जिन छवि तेरी यह .	३७
५१	जिन राग दोष त्यागा	७५
५३	जिन छवि लखत यह बुधि	७८
५३	जिन वैन सुनत मोरी भूल	७९
५४	जिनवानी जान सुजान रे	८०
७९	जिया तुम चालो अपने	११४
४२	जीव, तू अनादि हीतैं भूल्यौ	५९
	त	
७०	तुम सुनियो श्रीजिन नाथ	१०६
५६	तू काहे को करत रति तनमें	८४
६३	तोहि समझायो सौ सौ वार	९६
२५	त्रिभुवन आनंदकारी जि०	३६
	थ	
२५	थारातौ वैना में सरधान	३५
	द	
२४	दीठा भागनतैं जिन पा०	३४
३	देखोजी आदीश्वर स्वामी	२
	ध	
५७	धन धन साधर्मीजन मिलन	८५
५७	धनि मुनि जिनकी लगी लो	८६
५८	धनि मुनि जिन यह ...	८७
५८	धनि मुनि निज आतम हि०	८८
२४	ध्यान कृपान पानि गहि०	३३
	न	
६४	न मानत यह जिय निपट	९७
५९	निज हित कारज करना	९०
८४	नित पीज्यो धी धारी	१२३
५९	निपट अयाना तैं आपा न०	८९
६	निरखत जिन चन्द्र वदन	६
२२	निरख सुख पायौ, जिन मु०	३१
२३	निरख सखि ऋषन को	३२
७८	निरखत जिन चंद री मा०	११३
२८	नेमी प्रभुकी श्याम वरण	४१
	प	
९	पद्मासद्म पद्मपद पद्मा	१०
५	पारस जिन चरण निरख	४
१२	पास अनादि अविद्या मेरी	१४
२२	प्यारी लागै म्हाने जिन छवि	३०
२९	प्रभु मोरी ऐसी बुधि कीजिये	४३
६९	प्रभु थारी आज महिमा जा०	१०५
	ब	
५	बन्दों अदभुत चन्द्र वीर जिन	५
८०	वामा घर वजत वधाई	११८
३०	वारी हो वधाई या शुभ सा०	४४
४४	विषयोंदा मद भानै ...	६३
७३	वृषभादि जिनेश्वर ध्याऊं,	११०
	भ	
७	भज ऋषिपति ऋषभेश ता०	८
१६	भविन-सरोरुहसूर भूरिगुन	१८
३५	भाखूं हित तेरो सुनि हो म०	५१

पृष्ठाङ्क.		पदसंख्या.
	म	
८३	मत राचो धीधारी ...	१२२
८१	मत कीज्यो जी यारी	१२०
८५	मत कीज्यौ जी यारी	१२४
६०	मन वच तन करि शुद्ध भजो०	९१
३४	मान ले या सिख मोरी	४९
६६	मानत क्यौं नहिं रे हे नर०	१०१
६१	मेरे कब है वा दिनकी सु०	९२
२०	मेरी सुध लीजे ऋषभस्वाम	२६
७७	मेरो मन ऐसी खेलत होरी	११२
२१	मैं आयो, जिन शरण	२८
२२	मैं हरख्यौ निरख्यौ मुख ते०	२९
२०	मोहि तारो जी क्यौं ना	२७
४०	मोही जीव भरमतमतें नाहिं	५६
६१	मोहिड़ा रे, जिय हितकारी०	९२
	र	
५६	राचि रह्यो पर माहिं तू०	८३
	ल	
३८	लखो जी या जिय भोरेकी०	५४
६२	लाल कैसे जावोगे, असरन०	९४
	श	
१९	शामरियाके नाम जपेतें	२४
१९	शिव मग दरसावन०	२५
	शिवपुरकी डगर समर०	९५

पृष्ठांक.		पदसंख्या
	स	
१	सकल ज्ञेय ज्ञायक तदपि	१
१७	सब देखो मिल हेली म्हारी०	२०
३९	सुनो जिया ये सत गुरुकी०	५५
८०	सुन जिन बैन श्रवन सु०	११७
८२	सुधि लीज्यो जी म्हारी	१२१
	ह	
६८	हम तो कबहूं न हित उ०	९८
६५	हम तो कबहूं न निज गु०	९९
६६	हम तो कबहू न निज घर०	१००
१६	हमारी वीर हरो भव पीर	१९
१८	हे जिन तेरे मैं शरणै आ०	२२
१८	हे जिन मेरी ऐसी बुध कीजे	२३
३२	हे जिन, तेरो सुजस उ०	४५
३२	हे मन तेरी को कुटेव यह	४६
६८	हे हित वाछक प्रानीरे	१०३
६८	हे नर भ्रमनींद क्यौं न	१०४
३३	हो तुम शठ अविचारी जि०	४७
३४	हो तुम त्रिभुवनतारी हो०	४८
	ज्ञ	
४०	ज्ञानी जीव निवार भर०	५७
७७	ज्ञानी ऐसी होली मचाई	१११

श्रीवीतरागाय नमः

जैनपदसंग्रह ।



१.

मंगलाचरण स्तुति ।

दोहा ।

सकल ज्ञेय ज्ञायक तदपि, निजानंदरसलीन ।
सो जिनेन्द्र जयवंत नित, अरिरजरहसविहीन ॥ १ ॥

पद्धरिछन्द ।

जय वीतराग विज्ञानपूर । जय मोहतिमिरको हरन सूर ॥ जय ज्ञान अनंतानंत धार । दृगसुख-वीरज-मंडित अपार ॥ २ ॥ जय परम-शांतिमुद्रा-समेत । भविजनको निज-अनुभूति-हेत ॥ भवि-भागन-वश जोगेवशाय । तुम धुनि ह्वै सुनि विभ्रम नसाय ॥ ३ ॥ तुम गुन चिंतत निजपर-विवेक । प्रगटै, विघटैं आपद अनेक ॥ तुम जगभूषन दूषनवियुक्त । सब महिमायुक्त विकलपमुक्त ॥४॥ अविरुद्ध शुद्ध चेतनस्वरूप । परमात्म परम-

---

१ चार घातिया कर्मोंसे रहित । २ अनन्तदर्शन, अनन्तसुख, अनन्तवीर्य । ३ भव्यजनोंके भाग्यसे । ४ मनवचनकायके योगोंके कारण ।

पावन अनूप ॥ शुभ-अशुभ-विभाव अभाव कीन ।
स्वाभाविकपरनतिमय अछीन ॥५॥ अष्टादशदोषविमुक्त
धीर । सुचतुष्टयमय राजत गभीर ॥ मुनि गनधरादि
सेवत महंत । नव-केवललब्धिरमा धरंत ॥ ६ ॥ तुम
शासन सेय अमेय[1] जीव । शिव गये जाहिं जै हैं स-
दीव ॥ भवसागरमें दुख खार-वारि । तारनको और न
आप टारि ॥७॥ यह लखि निजदुखगद[2] हरनकाज ।
तुम ही निमित्तकारन इलाज ॥ जाने, तातैं मैं शरन
आय । उचरों निजदुख जो चिर लहाय ॥८॥ मैं भ्रम्यो
अपनपो विसरि आप । अपनाये [3]विधिफल पुण्य पाप ॥
निजको परको करता पिछान । परमें अनिष्टता इष्ट
ठान ॥ ९ ॥ आकुलित भयो अज्ञान धारि । ज्यौं मृग
मृगतृष्णा जान वारि[4] ॥ तन-परनतिमें आपौ चितार ॥
कवहूं न अनुभयो स्वपद सार ॥ १० ॥ तुमको विन
जाने, जो कलेश । पाये सो तुम जानत जिनेश ॥ प-
शु-नारक-नर-सुरगतिमझार । भव धर धर मर्यो अनंत
वार ॥ ११ ॥ अव काललब्धिवलतैं दयाल । तुम द-
र्शन पाय भयो खुशाल ॥ मन शांत भयो मिट सकल-
द्वंद । चाख्यो स्वातमरस दुखनिकंद ॥ १२ ॥ तातैं
अव ऐसी करहु नाथ । विछुरै न कभी तुव चरन-

१ अपरिमाण । २ रोग । ३ कर्मफल । ४ पानी ।

साथ ॥ तुम गुन-गनको नहिं छेव[1] देव। जगतारनको तुव विरद एव ॥ १३ ॥ आतमके अहित विषय-कषाय। इनमें मेरी परनति न जाय॥ मैं रहों आपमें आप लीन। सो करो होंहुं ज्यों निजाधीन ॥ १४ ॥ मेरे न चाह कछु और ईश। रत्नत्रयनिधि दीजे मुनीश ॥ मुझ कारजके कारन सु आप। शिव[2] करहु हरहु मम मोह-ताप ॥ १५ ॥ शशि शांतिकरन तपहरन-हेत। स्वयमेव तथा तुम कुशल देत ॥ पीवत पियूष ज्यों रोग जाय। त्यों तुम अनुभवतैं भव नसाय ॥ १६ ॥ त्रिभुवन तिहुँकालमझार कोय। नहिं तुम विन निजसुखदाय होय ॥ मो उर यह निश्चय भयो आज। दुखजलधिउतारन तुम जहाज ॥ १७ ॥

दोहा।

तुम गुन-गन-मनि गनपती[3], गनत न पावहिं पार।
दौल स्वल्पमति किमि कहै, नमों त्रियोग[4] सँभार ॥१८॥

२.

देखो जी आदीश्वर स्वामी, कैसा ध्यान लगाया है। कर ऊपरकर सुभग विराजे, आसन थिर ठहराया है ॥ देखो जी० ॥ टेक ॥ जगतविभूति भूँतिसम[5] तज-

---

१ पार। २ मोक्ष। ३ गणधरदेव। ४ मनवचनकाय। ५ भस्म जैसी।

कर, निजानंद-पद ध्याया है। सुरभित[1]-श्वासा, आंशा-वासा नासादृष्टि सुहाया है॥ देखो जी० ॥ १ ॥ कंचन वरन चलै मन रंच न, सुरगिर[3] ज्यों थिर थाया है। जास पास अहि मोर मृगी हरि, जातिविरोध नसाया है॥ देखो जी० ॥ २ ॥ शुधउपयोग हुताशनमें जिन, वसुविधि समिधें जलाया है। श्यामलि अलिकावलि शिर सोहै, मानों धुआँ उड़ाया है॥ देखो जी० ॥३॥ जीवन मरन अलाभ लाभ जिन, तृन मनिको सम भाया है। सुर नरनाग नमहिं पद जाके, दौल तास जस गाया है॥ देखो० जी ॥ ४ ॥

३.

जिनवर-आनन-भान निहारत, भ्रमतमघान नसाया है॥ जिन० ॥ टेक ॥ वचन-किरन-प्रसरनतैं भविजन, मनसरोज सरसाया है। भवदुखकारन सुखविसतारन, कुपथ सुपथ दरसाया है॥ जिन० ॥ १ ॥ विनसाई, कर्ज जलसरसाई, निशिचर समरँ दुराया है। तस्कर प्रवल कषाय पलाये, जिन धन वोध चुराया है॥ जिन० ॥ २ ॥ लखियत उडुं न कुभाव कहूं अव, मोह

---

१ सुगंधित। २ दिशारूपी वस्त्र=दिगम्वरता। ३ सुमेरु। ४ सिंह। ५ होम …नेकी लकड़ियाँ। ६ काई, दूसरे पक्षमें—अज्ञानरूपी काई। ७ स्मर=कामदेव। चोर। ९ तारे।

उलूक लजाया है । [1]हंस कोकको शोक नश्यो निज,-परनतिचकवी पाया है ॥ जिन० ॥ ३ ॥ [3]कर्मबंधक-जकोप बँधे चिर, भवि-अलि मुंचन पाया है । दौल उजास निजातम अनुभव, उर जग अंतर छाया है ॥ जिन० ॥ ४ ॥

४.

पारस जिन चरन निरख, हरख यों लहायो, चितवत चंदा चकोर ज्यों प्रमोद पायो ॥ टेक ॥ ज्यों सुन घनघोर शोर, मोरहर्षको न ओर, रंक निधिसमाज राज पाय मुदित थायो ॥ पारस० ॥ १ ॥ ज्यों जन चिर-छुधित होय, भोजन लखि सुखित होय, भेषज गद-हरन पाय, सरुँज सुहरखायो ॥ पारस० ॥ २ ॥ वासर भयो धन्य आज, दुरित दूर परे भाज, शांतदशा देख महा, मोहतम पलायो ॥ पारस० ॥ ३ ॥ जाके गुन जानन जिम, भानन भवकानन इम, जान दौल शरन आय, शिवसुख ललचायो ॥ पारस० ॥ ४ ॥

५.

वंदों अदभुत चन्द्र वीर जिन, भवि-चकोरचितहारी ॥ वंदों० ॥ टेक ॥ सिद्धारथनृपकुलनभ-मंडन, खंडन

---

१ आत्मा । २ चकवा । ३ कर्मबंधरूपीकमलोंके कोष बँधे हुए थे उनसे । ४ छोर । ५ बहुतकालका भूखा । ६ दवाई । ७ रोगी । ८ वर्द्धमान भगवान् ।

भ्रमतम भारी । परमानंद-जलधिविस्तरित-श्वासा, आशा-छयकारी ॥ वंदों० ॥ १ ॥ उदित निरंतर॰ ॥ १ ॥ कंतर, कीरति किरन पसारी । दोष-मलंक-करथिर थाया है । मोहराहु निरवारी ॥ वंदों० ॥ २ ॥ कर्मावरेध नसाया अरोधित, वोधित शिवमगचारी । गनधरादि मुनि जिन, डुगन सेवत, नित पूनमतिथि धारी ॥ वंदों० ॥ ३ ॥ अखिल-अलोकाकाश-उलंघन, जासु ज्ञानउजियारी । दौलत मनसा-कुमुदनि-मोदन, जयो चरम-जगतारी ॥ वंदों० ॥ ४ ॥

६.

निरखत जिनचंद्र-वदन, स्वपरसुरुचि आई । निरखत० ॥ टेक ॥ प्रगटी निज आनकी, पिछान ज्ञान भानकी, कला उदोत होत काम, जामनी पलाई । निरखत० ॥ १ ॥ सास्वत आनंद स्वाद, पायो विनस्यो विषाद, आनमें अनिष्ट इष्ट, कलपना नसाई । निरखत० ॥ २ ॥ साधी निज साधकी, समाधि मोहव्याधिकी, उपाधिको विराधिकैं, अराधना सुहाई । निरखत० ॥३॥ धन दिन छिन आज सुगुनि, चिंते जिनराज अवै, सुधरे सब काज दौल, अचल सिद्धि पाई । निरखत० ॥ ४ ॥

---

१ दोषा-रात्रि । २ पापरूपी कलंक । ३ कर्मावरणरूपी बादलोंसे जो ढकता नहीं है । ४ तारागण । ५ मनरूपी कुमोदनीको हर्षित करनेवाला । ६ अन्तिम तीर्थंकर । ७ रात्रि ।

७.

जबतैं आनंद-जननि दृष्टि परी माई । तबतैं संशय विमोह भरमता विलाई । जबतैं० ॥ टेक ॥ मैं हूं चितचिह्न, भिन्न परतें, पर जड़स्वरूप, दोउनकी एकता सु, जानी दुखदाई । जबतैं० ॥ १ ॥ रागादिक बंधहेत, बंधन बहु विपति देत, संवर हित जान तासु, हेतु ज्ञानताई । जबतैं० ॥ २ ॥ सब सुखमय शिव है तसु, कारन विधिझारन[1] इमि, तत्त्वकी विचारन जिन,-वानि सुधि कराई । जबतैं० ॥ ३ ॥ विषयचाहज्वालतैं, दह्यो अनंतकालतैं सु,-धांबु[2]स्यात्पदांकगाह,-तें प्रशांति आई । जबतैं० ॥ ४ ॥ याविन जगजालमें न, शरन तीनकालमें सँ,-भाल चित भजो सदीव, दौल यह सुहाई । जबतैं० ॥ ५ ॥

८.

भज ऋषिपति[3] ऋषभेश[4] ताहि नित, नमत अमर असुरा। मनमथ[5]-मथ दरसावन शिवपंथ[6], वृष-रथ-चक्रधुरा ॥ भज० ॥ टेक ॥ जा प्रभु गर्भछमासपूर्व सुर, करी सुवर्ण धरा । जन्मत सुरगिर-धर सुरगनयुत, हरि[7] पय न्हवन करा ॥ भज० ॥ १ ॥ नटत नर्त्तकी[8] विलय

---

१ निर्जरा । २ स्याद्वादरूपी अमृतमें अवगाहन करनेसे । ३ मुनिनाथ । ४ धर्मके ईश आदिनाथ भगवान् । ५ कामदेवके मथनेवाले । ६ मोक्षपथ । ७ इन्द्र । ८ अप्सरा ।

देख प्रभु, लहि विराग सु थिरा । तबहिं देवऋषि आय नाय शिर, जिनपद पुष्प धरा ॥ भज० ॥ २ ॥ केवलसमय जास वच रविने, जगभ्रम-तिमिर हरा । सुदृगबोधचारित्रपोत लहि, भवि भवसिंधुतरा ॥ भज० ॥३॥ योगसँहार निवार शेषविधि, निवसे वसुम धरा । दौलत जे याको जस गावैं, ते ह्वैं अज अमरा ॥ भज० ॥४॥

९.

जगदानंदन जिन अभिनंदन, पदअरविंद नमूं मैं तेरे । जग० ॥ टेक ॥ अरुनवरन अघतापहरन वर, वितरन कुशल सु शरन बड़ेरे । पद्मासदन मदन-मद-भंजन, रंजन मुनिजनमनअलिकेरे ॥ जग० ॥ १ ॥ ये गुन सुन मैं शरनै आयो, मोहि मोह दुख देत घनेरे । ता मदभानन स्वपरपिछानन, तुमविन आन न कारन हेरे ॥ जग० ॥ २ ॥ तुम पदशरन गही जिननें ते, जामन-जरा-मरन-निरवेरे । तुमतैं विमुख भये शठ तिनको, चहुँगति विपतमहाविधि पेरे ॥ जग० ॥ ३ ॥ तुमरे अमित सुगुनज्ञानादिक, सतत मुदित गनराज उगेरे । लहत न मित मैं पतित कहों किम, किन शशकन गिरिराज उखेरे ॥ जग० ॥ ४ ॥ तुम विनराग-

---

१ लौकांतिकदेव । २ वचनरूपी सूर्यने । ३ जहाज । ४ शेषके चार-अघातिकर्म । ५ आठवीं पृथिवी अर्थात् मोक्ष । ६ लक्ष्मीके घर । ७ मदका नाश करनेके लिये । ८ गाये । ९ पापी । १० खर्गोशोंने ।

दोष दर्पन ज्यों, निज निज भाव फलैं तिनकेरे। तुम हो सहज जगत उपकारी, शिवपथ-सारथवाह भलेरे॥ जग०॥ ५॥ तुम दयाल वेहाल वहुत हम, काल-कराल-व्याल-चिर-घेरे। भाल नाय गुणमाल जपों तुम, हे दयाल, दुखटाल सवेरे॥ जग०॥ ६॥ तुम वहु पतित सुपावन कीनें, क्यों न हरो भवसंकट मेरे। भ्रम-उपाधि-हर शमसमाधिकर, दौल भये तुमरे अव चेरे॥ जग०॥ ७॥

१०.

पद्मसद्म पद्मपद पद्मा,-मुक्तिसद्म दरशावन है। कलि-मल-गंजन मन-अलिरंजन, मुनिजन शरन सुपावन है॥ पद्मा०॥ टेक॥ जाकी जन्मपुरी कुशंविका, सुर नर-नाग-रमावन है। जास जन्मदिनपूरव पटनव,-मास रतन वरसावन है॥ पद्मा०॥१॥ जा तपथान पपोसा-गिरि सो, आतमज्ञान थिर-थावन है। केवलजोतउदोत भई सो, मिथ्यातिमिर-नशावन है॥ पद्मा०॥ २॥ जाको शासन पंचाननसो, कुमति-मंतंग-नशावन है। राग विना सेवकजनतारक, पै तसु रुषतुष भाव न

१ शीघ्र। २ शान्तिसमाधि। ३ समवसरण लक्ष्मीके घर। ४ पद्मप्रभके चरण। ५ पद्मामुक्ति=मोक्षलक्ष्मी। ६ पपोसा नामका पर्वत है। ७ उपदेश। ८ सिंह। ९ हाथी। रोष, तोष=द्वेष, राग।

है ॥ पद्मा० ॥ ३ ॥ जाकी महिमाके वरननसों, सुर[1]-गुरुबुद्धि थकावन है। दौल अल्पमतिको कहबो जिमि, शशक[2]गिरिंद धकावन है ॥ पद्मा० ॥ ४ ॥

११.

चन्द्रानन जिन चन्द्रनाथके, चरन चतुर-चित ध्यावतु हैं। कर्म-चक्र-चकचूर चिदातम, चिनमूरतपद पावतु हैं ॥ चन्द्रा० ॥ टेक ॥

हाहा[3]-हूहू-नारद-तुंवर, जासु अमल जस गावतु हैं। पद्मा सची शिवा श्यामादिक, करधर वीन वजावतु हैं ॥ चन्द्रा० ॥ १ ॥ विन इच्छा उपदेशमाहिं हित, अहित जगत दरसावतु हैं। जा पदतट सुरनरमुनि[4]घट चिर, विकटविमोह नशावतु हैं ॥ चन्द्रा० ॥२॥ जाकी चन्द्रवरन तनदुतिसों, कोटिक सूर[5] छिपावतु हैं। आतमजोतउदोतमाहिं सब, ज्ञेय[6] अनंत दिपावतु हैं ॥ चन्द्रा० ॥ ३ ॥ नित्य-उदय अकलंक अछीन सु, मुनि-उडु[7]-चित्त रमावतु हैं। जाकी ज्ञानचन्द्रिका लोका,-लोकमाहिं न समावतु हैं ॥ चन्द्रा० ॥ ४ ॥ साम्यसिन्धु-वर्द्धन[8] जगनंदन[9],-को शिर हरिगन नावतु हैं। संशय

---

१ इन्द्रकी बुद्धि। २ जैसे खर्गोश सुमेरुको धकेलना चाहे। ३ हाहा, हूहू, नारद और तुंवर ये गंधर्व देवोंके भेद हैं। ४ देव मनुष्यों और मुनियोंके हृदयका। ५ सूर्य। ६ पदार्थ। ७ तारा। ८ समतारूपी समुद्रको बढ़ानेवाला। ९ जगको आनंदित करनेवाला।

विभ्रम मोह दौलके, हर जो जगभरमावतु है ॥ चन्द्रा० ॥ ५ ॥

१२.

जय जिन वासुपुज्य शिव-रमनी-रमन मदन-दनु-दारन हैं । बालकाल संजम सँभाल रिपु, मोहव्यालब-लमारन हैं ॥ जय जिन० ॥ १ ॥ जाके पंचकल्यान भये चंपापुरमें सुखकारन हैं । वासवबृंद अमंद मोद धर, किये भवोदधितारन हैं ॥ जय जिन० ॥ २ ॥ जाके वैनसुधा त्रिभुवनजन,-को भ्रमरोगविदारन हैं । जा गुनचिंतन अमलअनल मृत,-जनम-जरा-वन-जारन हैं ॥ जय० ॥ ३ ॥ जाकी अरुन शांतिछवि-रविभा, दिवसप्रबोधप्रसारन हैं । जाके चरनशरन सुरतरु वांछित शिवफल विस्तारन हैं ॥ जय० ॥ ४ ॥ जाको शासन सेवत मुनि जे, चारज्ञानके धारन हैं । इन्द्र-फणींद्र-मुकुटमणि-दुतिजल, जापद कलिल पखारन हैं ॥ जय० ॥ ५ ॥ जाकी सेव अछेवरमाकर, चहुंगतिविपति उधारन हैं । जा अनुभवघनसार सु आकुल, तापकलाप-निवारन हैं ॥ जय० ॥ ६ ॥ द्वादशमों जिनचन्द्र जास

---

१ कामदेवरूपी राक्षसको मारनेवाले । २ मोहरूपी साप । ३ इन्द्रोंके समूह । ४ कल्पवृक्ष । ५ पाप । ६ अक्षयलक्ष्मी (मोक्ष) की करनेवाली । ७ अनुभवरूपी मलयागर चंदन । ८ आकुलताके तापका समूह ।

वर, जस उजासको पार न हैं। भक्तिभारतैं नमें दौल-के, चिर-विभाव-दुख टारन हैं॥ जय०॥ ७॥

१३.

कुंथुन[1]के प्रतिपाल कुंथु जग,-तार सारगुनधारक हैं। वर्जितग्रंथ[2] कुपंथवितर्जित, अर्जितपंथ[3] अमारक हैं॥ कुंथुनके०॥ टेक॥ जाकी समवसरनबहिरंग,-रमा गनेंधार[4] अपार कहैं। सम्यग्दर्शन-बोध-चरण-अध्यातम-रमा-भर-भारकहैं॥ कुंथु०॥१॥ दशधा-धर्म-पोतँकर[5] भव्यन,-को भवसागर तारक हैं। वरसमाधि-वन-घन विभावरज, पुं-जनिकुंजनिवारक हैं॥ कुंथु०॥ २॥ जासु ज्ञाननभमें अलोकजुत–लोक यथा इक तारक हैं। जासु ध्यानह-स्तावलम्ब दुख-कूपविरूप-उधारक हैं॥ कुंथु०॥ ३॥ तज छँखंडकमला[6] प्रभु अमला, तपकमला आगारक हैं। द्वादशसभा-सरोजसूर भ्रम, तरुअंकूरउपारक हैं॥॥ कुंथुनके०॥ ४॥ गुणअनंत कहिलहत अंत को? सु-रगुरुसे बुध हार कहैं। नमें दौल हे कृपाकंद, भवद्वंद टार बहुवार कहैं॥ कुंथुन०॥ ५॥

१४.

पाँस[7] अनादिअविद्या मेरी, हरन पांस[8]-परमेशा है।

---

१ छोटे २ जीवोंके भी। २ परिग्रहरहित। ३ अहिंसक पथके अर्जन कर-नेवाले। ४ गणधर देव। ५ दशलक्षणधर्मरूपी जहाज करके। ६ छहखंडकी लक्ष्मी। ७ अनादि अविद्या रूपी फासी। ८ पार्श्वनाथ भगवान्।

चिद्विलास सुखराशप्रकाशवितरन त्रिभोन-दिनेशा[1] है ॥ टेक ॥ दुर्निवार कंदर्पसर्पको[2] दर्पविदरन खगेशा[3] है। दुठ[4] शठ-कमठ-उपद्रव-प्रलयसमीर-सुवर्णनगेशा है ॥ पास० ॥ १ ॥ ज्ञान अनंत अनंत दर्श बल, सुख अनंत पदमेशा[5] है। स्वानुभूति-रमनी-वर[6] भवि-भव-गिर-पवि[7] शिवसदमेशा[8] है ॥ पास० ॥ २ ॥ ऋषि मुनि यति अनगार सदा तिस, सेवत पादकुशेसा[9] है। वदनचंद्रतैं झरै गिरामृत[10], नाशन जन्म-कलेशा है ॥ पास० ॥ ३ ॥ नाममंत्र जे जपैं भव्य तिन, अघअहि नशत अशेषा[11] है। सुर अहमिन्द्र खगेन्द्र चन्द्र ह्वै, अनुक्रम होंहिं जिनेशा है ॥ पास० ॥ ४ ॥ लोक-अलोक-ज्ञेय-ज्ञायक पै, रत निजभावचिदेशा है। रागविना सेवकजन-तारक, मारक[12] मोह न द्वेषा है ॥ पास० ॥ ५ ॥ भद्रसमुद्र-विवर्द्धन अद्भुत-पूरनचन्द्र सुवेशा है। दौल नमै पद तासु, जासु, शिवथल समेदअचलेशा[13] है ॥ पास० ॥ ६ ॥

---

१ तीन लोकके सूर्य। २ कामदेव रूपी सर्पको। ३ गरुड़पक्षी। ४ दुष्ट, शठ, ऐसे कमठके उपद्रवरूपी प्रलयकालकी आंधीको सहन करनेवाले मेरुपर्वत हो। ५ लक्ष्मीके ईश। ६ स्वानुभवरूपी स्त्रीके दूलह। ७ भव्योंके संसार रूपी पर्वतके नष्ट करनेको वज्रके समान। ८ मोक्ष महलके मालिक। ९ चरण-कमल। १० वचनरूपी अमृत। ११ सब। १२ मोहके मारनेवाले। १३ सम्मेदशिखर।

१५.

जय शिव-कामिनि-कंत वीर[1] भगवंत अनंतसुखाकर हैं। विधि-गिरि-गंजन[2] बुधमनरंजन, भ्रमतमभंजन भाकर[3] हैं॥ जय०॥ टेक॥ जिनउपदेश्यो दुविधधर्म[4] जो, सो सुरसिद्धरमाकर[5] हैं। भवि-उर-कुसुदनि-मोदन भवतप, हरन अनूप निशाकर[6] हैं॥ जय०॥ १॥ परमविरागि रहैं जगतैं पै, जगतजंतुरक्षाकर हैं। इन्द्र फणीन्द्र खगेन्द्र चन्द्र जग,-ठाकर ताके चाकर हैं॥ जय०॥ २॥ जासु अनंत सुगुनमणिगन नित गनत गनीगन थाक रहैं। जा प्रभुपद नवकेवलिलब्धि सु, कमलाको कमलाकर हैं॥ जय०॥ ३॥ जाके ध्यान-कृपान[7] रागरुष,-पासहरन समताकर हैं। दौल नमै कर जोर हरन भव, बाधा शिवराधाकर हैं॥ जय०॥ ४॥

१६.

जय श्रीवीर जिनेन्द्रचन्द्र, शतइन्द्रवंद्य जगतारं। जय०॥ टेक॥ सिद्धारथकुल-कमल-अमल-रवि, भवभूधरपविभारं[8]। गुनमनिकोष अदोष मोषपति, विपिन कषायतुषारं[9]॥ जय०॥ १॥ मदनकदन शिवसदन

---

१ वर्द्धमान भगवान्। २ कर्मरूपीपर्वतके नष्ट करनेवाले। ३ सूर्य। ४ दो प्रकारका धर्म गृहस्थ और मुनिका। ५ स्वर्ग और मोक्ष लक्ष्मीका करनेवाला है। ६ चन्द्रमा। ७ ध्यानरूपी तरवारसे रागद्वेषकी फासीको काटनेवाला। ८ संसाररूपी पर्वतको बड़े भारी वज्रके समान। ९ कषायरूपी वनको तुषार।

पद-नमित, नित अनमित यतिसारं । रमा[1]अनंतकंत अंतक[2]-कृत,-अंत जंतुहितकारं ॥ जय० ॥२॥ फंद[3]-चंद-नाकंदन दादुर[4]दुरित तुरित निर्वारं । रुद्र[5]रचित अतिरुद्र उपद्रव,-पवन अद्रिपति सारं ॥ जय० ॥३॥ अंतातीत[6] अचिंत्य सुगुन तुम, कहत लहत को पारं । हे जगमौल[7] दौल तेरे क्रम, नमै शीस कर धारं ॥ जय० ॥ ४ ॥

१७.

उरग-सुरग-नरईश[8] शीस जिस,आतपत्र[9] त्रिधरे[10]। कुंदकुं[11]-सुमसम चमर अमरगन, ढारत मोदभरे ॥ उरग० ॥ टेक ॥ तरुअशोक जाको अवलोकत, शोकथोक उजरे । पारजातसंतानकादिके, वरसत सुमन वरे ॥ उरग० ॥ १ ॥ सुमणिविचित्र-पीठअंबुजपर, राजत जिन सुथिरे । वर्णविगत[12] जाकी धुनिको सुनि, भवि भवसिंधु-तरे ॥ उरग० ॥ २ ॥ साढ़े वारह कोड़ जातिके, वाजत तूर्य[13] खरे । भामंडलकी दुतिअखंडने, रविशशि मंद करे । उरग० ॥ ३ ॥ ज्ञान अनंत अनंत दर्श वल, शर्म अनंत भरे । करुणामृतपूरित पद जाके, दौलत हृदय धरे ॥ उरग० ॥ ४ ॥

---

१ अनत मोक्षलक्ष्मीके पति । २ यमराजका भी किया है अन्त जिन्होंने ऐसे । ३ चंदनासतीके फद काटनेवाले । ४ समवशरणमें पुष्प लेकर जानेवाले मेंडकके पाप । ५ रुद्रनामक दैत्यके किये हुए । ६ अनत । ७ जगन्मुकुट । ८ चरण । ९ छत्र । १० तीन धरे । ११ कुंदके फूल । १२ अनक्षरी । १३ वाजे ।

१८.

भविन–सरोरुहसूर[1] भूरिगुनपूरित अरहंता। दूरितदोष[2] मोष पथघोपक, करन कर्मअन्ता ॥ भविन० ॥ टेक ॥ दर्शबोधतैं[3] युगपतलखि जाने जु भावऽनंता। विगताकुल[4] जुतसुख अनंत विन,-अंत शक्तिवंता ॥ भविन० ॥१॥ जा तनजोतउदोतथकी रवि, शशिदुति लाजंता। तेजथोक अवलोक लगत है, फोक सचीकंता[5] ॥ भविन० ॥ २ ॥ जास अनूप रूपको निरखत, हरखत हैं संता। जाकी धुनि सुनि मुनि निजगुन-मुन[6], परँगर[7] उगलंता ॥ भविन० ॥ ३ ॥ दौल तौलविन[8] जस तस वरनत, सुरगुरु[9] अकुलंता। नामाक्षर सुन कान स्वानसे, राँक[10] नाँकगंता[11] ॥ भविन० ॥ ४ ॥

१९.

हमारी वीर हरो भवपीर। हमारी० टेक ॥ मैं दुख-तपित दयामृतसर तुम, लखि आयो तुम तीर। तुम परमेश मोखमगदर्शक, मोहदवानलनीर ॥ हमारी० ॥१॥ तुम विनहेत जगतउपकारी, शुद्ध चिदानँद धीर। गनपतिज्ञानसमुद्र न लंघैं, तुम गुनसिंधु गहीर ॥ हमारी० ॥ २ ॥ याद नहीं मैं विपति सही जो, धर धर

१ भव्यरूपीकमलोंको सूर्य। २ दोषरहित। ३ दर्शन और ज्ञानसे। ४ आकुलतारहित। ५ इंद्र। ६ अपने गुणोंका मनन करके। ७ विभावरूपी विप। ८ अपरिमित। ९ इन्द्र। १० रंक नाचीज। ११ स्वर्ग गया।

अमित शरीर। तुम गुनचिंतत नशत तथा भय, ज्यों घन चलत समीर ॥ हमारी० ॥ ३ ॥ कोटवारकी अरज यही है, मैं दुख सहूं अधीर। हरहु वेदनाफंद दौलको, कतर कर्म जंजीर ॥ हमारी० ॥ ४ ॥

२०.

सब मिल देखो हेली म्हारी हे, त्रिसलाबाल वदन रसाल। सब० ॥ टेक ॥ आये जुतसमवसरन कृपाल, विचरत अभय व्याल मराल, फलित भई सकल तरुमाल। सब० ॥ १ ॥ नैन न हाल भृकुटी न चाल, वैन विदारैं विभ्रमजाल, छवि लखि होत संत निहाल। सब० ॥ २ ॥ वंदन काज साज समाज, संग लिये स्वजन पुरजन ब्राज, श्रेणिक चलत है नरपाल। सब० ॥ ३ ॥ यों कहि मोदजुत पुरवाल, लखन चाली चरमजिनपाल, दौलत नमत कर धर भाल ॥ सब० ॥ ४ ॥

२१.

अरिरजरहस[1][2][3] हनन प्रभु अरहन, जैवंतो जगमें। देव अदेव सेव कर जाकी, धरहिं मौलि पगमें ॥ अरिरज० ॥ टेक ॥ जा तन अष्टोत्तरसहस्र लक्खन लखि कलिल शमें। जा वचदीपशिखातैं मुनि विचरैं शिवमारगमें ॥ अरिरज० ॥ १ ॥ जास पासतैं शोकहरन गुन, प्रगट भयो नगमें[4]। व्यालमराल कुरंगसिंघको, जातिविरोध गमें ॥

---

१ मोह। २ ज्ञानदर्शनावरणी। ३ अन्तराय। ४ अशोकवृक्षमें।

अरिरज० ॥ २ ॥ जा जस-गगन उलंघन कोऊ, क्षमे[1] न मुनीखगमें। दौल नाम तसु सुरतरु है या, भवमरुथल[2]मगमें ॥ अरि० ॥ ३ ॥

२२.

हे जिन तेरे मैं शरणै आया। तुम हो परमदयाल जगतगुरु, मैं भव भव दुख पाया ॥ हे जिन० ॥ टेक ॥ मोह महादुठ[3] घेर रह्यौ मोहि, भवकानन[4]में भटकाया। नित निज ज्ञानचरननिधि विसर्यौ, तन धनकर अपनाया ॥ हे जिन० ॥ १ ॥ निजानंदअनुभवपियूष[5] तज, विषय-हलाहल खाया। मेरी भूल मूल दुखदाई, निमित्त मोह-विधि थाया ॥ हे जिन० ॥ २ ॥ सो दुठ होत शिथिल तुमरे ढिग, और न हेतु लखाया। शिवस्वरूप शिव-मगदर्शक तुम, सुयश मुनीगन गाया ॥ हे जिन० ॥ ३ ॥ तुम हो सहजनिमित जगहितके, मो उर निश्चय भाया। भिन्न होहुं [6]विधितैं सो कीजे, दौल तुम्हैं सिर नाया ॥ हे जिन० ॥ ४ ॥

२३.

हे जिन मेरी, ऐसी बुधि कीजै। हे जिन० ॥ टेक ॥ रागद्वेषदावानलतैं बचि, समतारसमें भीजै। हे जिन० ॥ १ ॥ परमें त्याग अपनपो[7] निजमें, लाग न कब

१ समर्थ। २ संसाररूपी मारवाड़ देशके मार्गमें। ३ दुष्ट। ४ संसार वन। ५ अमृत। ६ कर्मोंसे। ७ आत्मत्व अपनापना।

छीजै ॥ हे जिन० ॥ २ ॥ कर्म कर्मफलमाहिं न राचै, ज्ञानसुधारस पीजै ॥ हे जिन० ॥ ३ ॥ मुझ कारजके तुम कारन वर, अरज दौलकी लीजै । हे जिन० ॥ ४ ॥

२४.

शामरियाके नाम जपेतैं, छूट जाय भवभामरियां । शाम० ॥ टेक ॥ दुरित दुरत पुन पुरत फुरतैं गुन, आतमकी निधि आगरियां । विघटत है परदाह चाह झट, गटकतैं समरस गागरियां । शाम० ॥ १ ॥ कटत कलंक कर्म कलसायन; प्रगटत शिवपुरडाँगरियां । फटत घटाघन मोह छोहं हट, प्रगटत भेदज्ञान घरियां ॥ शाम० ॥ २ ॥ कृपाकटाक्ष तुमारीहीतैं, जुगलनागवि-पदा टरियां । धार भये सो मुक्तिरमावर, दौल नमैं तुव पागरियां ॥ शाम० ॥ ३ ॥

२५.

शिवमगदरसावन रांवरो दरस । शिवमग० ॥ टेक ॥ पर-पद-चाह-दाह-गद नाशन, तुम वचभेषज-पान सरस । शिवमग० ॥ १ ॥ गुणचितवत निज अनुभव प्रगटै, विघटै विधिठग दुविध तरस । शिवमग० ॥ २ ॥ दौल

१ भवभ्रमण । २ पाप । ३ छिपते हैं । ४ स्फुरित होता है । ५ गटकते हैं अर्थात् पीते हैं । ६ कालिख । ७ मोक्षकी डगर अर्थात् रास्ता । ८ रागद्वेष । ९ तुम्हारा नाम धारण करके । १० आपका । ११ पुद्गलसम्बन्धी चाहका दाहरूपीरोग नाशकरनेके लिये दवाई ।

अवांची संपति सांची, पाय रहै थिर राच सरस। शिवमग० ॥ ३ ॥

२६.

मेरी सुध लीजै रिषभस्वाम। मोहि कीजै शिवपथ-गामी ॥ टेक ॥ मैं अनादि भवभ्रमत दुखी अब, तुम दुख मेटत कृपाधाम। मोहि मोह घेरा कर चेरा, पेरा चहुंगति विदित ठाम। मेरी० ॥ १ ॥ विषयन मन ललचाय हरी मुझ, शुद्धज्ञान-संपति ललाम। अथवा यह जड़को न दोष मम, दुखसुखता, परनतिसुकाम ॥ मेरी० ॥ २ ॥ भाग जगे अब चरन जपे तुम, वच सुनके गहे सुगुनग्राम। परमविराग ज्ञानमय मुनिजन, जपत तुमारी सुगुनदाम ॥ मेरी० ॥ ३ ॥ निर्विकार संपति कृति तेरी, छविपर वारों कोटि काम। भव्यनिके भव हारन कारन, सहज यथा तमहरन घाम ॥ मेरी० ॥ ४ ॥ तुम गुनमहिमा कथनकरनको, गिनत गनी निजबुद्धि खाम। दौलतनी अज्ञान परनती, हे जगत्राता कर विराम ॥ मेरी० ॥ ५ ॥

२७.

मोहि तारो जी क्यौं ना? तुम तारक त्रिजग त्रिकालमें, मोहि० ॥ टेक ॥ मैं भवउदधि पस्यौ दुख

१ अवाच्य, जिसका वर्णन न हो सके। २ गुणोंके समूह। ३ गुणोकी माला। ४ सूर्यका प्रकाश। ५ गणधर। ६ कोताही, कमी। ७ दौलतकी।

भोग्यौ, सो दुख जात कह्यौ ना। जामन मरन अनंतत-नो तुम, जाननमाहिं छिप्यौ ना॥ मोहि० ॥ १ ॥ विषय विरसरस विषम भख्यौ मैं, चख्यौ न ज्ञान सलोना। मेरी भूल मोहि दुख देवै, कर्मनिमित्त भलौ ना॥ मोहि० ॥ २ ॥ तुम पदकंज धरे हिरदै जिन, सो भवताप तप्यौ ना। सुरगुरुहूके वचनकरनकर, तुम जसगगन नप्यौ ना॥ मोहि० ॥ ३ ॥ कुगुरु कुदेव कुश्रुत सेये मैं, तुम मत हृदय धस्यौ ना। परम विराग ज्ञानमय तुम जा,-ने विन काज सस्यौ ना ॥ मोहि० ॥ ४ ॥ मो सम पतित न और दयानिधि, पतिततार तुम सौ ना। दौलतनी अरदास यही है, फिर भववास वसौं ना॥ मोहि० ॥ ५ ॥

२८.

मैं आयौ, जिन शरन तिहारी। मैं चिरदुखी विभावभावतैं, स्वाभाविक निधि आप विसारी॥ मैं० ॥ १ ॥ रूप निहार धार तुम गुन सुन, वैन होत भवि शिवमगचारी। यौं ममकारजके कारन तुम, तुमरी सेव एव उर धारी॥ मैं० ॥ २ ॥ मिल्यौ अनंत जन्मतैं अवसर, अव विनऊ हे भवसरतारी। परमें इष्ट अनिष्ट कल्पना, दौल कहै झट मेट हमारी॥ मैं० ॥ ३ ॥

---

१ वचनरूपी किरणोंसे अथवा हाथोंसे। २ मापा नहीं गया। ३ पापी। ४ पापियोंका तारनेवाला। ५ अर्जी।

२९.

मैं हरख्यौ निरख्यौ मुख तेरो। नासान्यस्त[1] नयन भ्रू हलय[2] न, वयन निवारन मोह अँधेरो ॥ मैं० ॥ १ ॥ परमें कर मैं निजबुधि अब लों, भवसरमें दुख सह्यौ घनेरो। सो दुखभानन स्वपर, पिछानन, तुमविन आन न कारन हेरो ॥ मैं० ॥ २ ॥ चाह भई शिवराहलाहकी[3], गयौ उछाह असंजमकेरो। दौलत हितविराग चित आन्यौ, जान्यौ रूप ज्ञानदृग मेरो ॥ मैं० ॥ ३ ॥

३०.

प्यारी लागै म्हाने जिन छवि थारी ॥ टेक ॥ परम निराकुलपद दरसावत, वर विरागताकारी। पटभूषन विन पै सुंदरता, सुरनरमुनिमनहारी ॥ प्यारी० ॥१॥ जाहि विलोकत भवि निज निधि लहि, चिरविभावता टारी। निरनिमेषतैं[4] देख सचीपति[5], सुरता[6] सफल विचारी ॥ प्यारी० ॥ २ ॥ महिमा अकथ होत लख ताको, पशु सम समकितधारी। दौलत रहो ताहि निरखनकी, भव भव टेव हमारी ॥ प्यारी० ॥ ३ ॥

३१.

निरख सुख पायौ, जिन मुखचंद। नि० ॥ टेक ॥ मोह महातम नाश भयौ है, उर अंबुज प्रफुलायौ।

---

१ नासिकापर लगाई है दृष्टि जिसने। २ हिलते नहीं हैं। ३ लाभ—प्राप्तिकी। ४ टिमकाररहित। ५ इन्द्र। ६ देवपणा।

ताप नस्यौ वढ़ि उदधि अनंद । निरख० ॥ १ ॥ चकवी कुमति विछुर अति विलखै, आतमसुधा स्रवायौ । शिथिल भये सव विधिगनफंद ॥ निरख० ॥ २ ॥ विकट भवोदधिको तट निकट्यौ, अघतरुमूल नसायौ। दौल लह्यौ अव सुपद स्वछंद ॥ निरख० ॥ ३ ॥

३२.

निरख सखि ऋषिनको ईश यह ऋषभ जिन, परखिके स्वपर पर[1]सौंज छारी । नैन नाशाग्र धरि मैन[2] विनसायकर, मौनजुत स्वास दिशि[3]-सुरभिकारी ॥ निरख० ॥ १ ॥ धरासम क्षांतियुत [4]नरामरखचरनुत, वि[5]युतरागादिमद दुरि[6]तहारी । जास [7]क्रमपास भ्रमनाश पं[8]चास्य मृग, वासकरि प्रीतिकी रीति धारी ॥ निरख० ॥ २ ॥ [9]ध्यानदवमाहिं विधि[10]दारु प्रजराहिं सिर, केशशुभ जिमि धुआं दिशि वि[11]थारी । फँसे जगपंक जनरंक तिन काढ़ने, किधौं जगनाह यह वाँह [12]सारी ॥ निरख० ॥ ३ ॥ तप्त [13]हाटकवरन वसन विन आभरन, खरे थिर ज्यौं शिखर मेरु[14]कारी । दौलको दैन शिवधौल[15] जगमौल जे, तिन्हैं कर जोर वंदन हमारी ॥ निरख० ॥४॥

---

१ परपरणति । २ काम । ३ दिशाओंको सुगन्धित करनेवाली । ४ मनुष्य देव विद्याधरोंसे वन्दनीय । ५ रहित । ६ पाप । ७ चरण । ८ सिंह । ९ ध्यानरूपीअग्निनें । १० कर्मरूपी ईंधन । ११ विस्तारी । १२ पसारी । १३ तपाये हुए सोनेका सा रंग । १४ मेरुका । १५ मुक्तिरूपी महल ।

३३.

ध्यानकृपान[1] पानि गहि नासी, त्रेसठ प्रकृति[2] अरी। शेष पचासी लाग रही हैं, ज्यौं जेवरी जरी ॥ ध्यान० ॥ टेक ॥ दुठ अनंगमातंगभंगकर[3], है प्रबलंगहरी[4]। जा पदभक्ति भक्तजन-दुख-दावानल-मेघझरी ॥ ध्यान० ॥ १ ॥ नवल धवल पल[5] सोहै कलमें[6], क्षुधतृषव्याधि टरी। हलत न पलक अलक नख बढ़त न, गति नभ-माहिं करी। ध्यान० ॥ २ ॥ जा विन शरन मरन जर-धरधर, महा असात भरी। दौल तास पद दास होत है, वास मुक्तिनगरी ॥ ध्यान० ॥ ३ ॥

३४.

दीठा भागनतैं जिनपाला, मोहनाशनेवाला। दीठा० ॥ टेक ॥ सुभग निशंक रागविन यातैं, वसन न आयुध वाला। मोह० ॥ १ ॥ जास ज्ञानमें युगपत भासत, सकल पदारथमाला। मोह० ॥ २ ॥ निजमें लीन हीन इच्छा पर,—हितमितवचन रसाला। मोह० ॥ ३ ॥ लखि जाकी छवि आतमनिधि निज, पावत होत निहाला। मोह० ॥ ४ ॥ दौल जासगुन चिंतत रत है, निकट विकट भवनाला ॥ मोह० ॥ ५ ॥

१ ध्यानरूपी तलवार। २ घातियाकर्मोंकी प्रकृतियें। ३ कामदेवरूपी है... को मारनेवाले। ४ वलवान् सिंह। ५ मास व रुधिर। ६ शरीरमें। ७ के... सम्यग्दृष्टीसे लगाकर वारहवें गुणस्थानतकके जीवोंको जिन सज्ञा है, उन... ...। ९ वी।

क
पौ

३५.

थारा तौ वैनोंमें[1] सरधान घणो छै, म्हारै छवि निरखत हिय सरसावै । तुमधुनिघन[2] परचहन-दहनहर[3], वर समता-रस-झर वरसावै । थारा० ॥ १ ॥ रूपनिहारत ही वुधि ह्वै सो, निजपरचिह्न जुदे दरसावै । मैं चिदंक[4] अकलंक अमल थिर, इन्द्रियसुखदुख[5] जड़फरसावै । थारा० ॥ २ ॥ ज्ञानविरागसुगुनतुम तिनकी, प्रापति-हित सुरपति[6] तरसावै । मुनि वड़भाग लीन तिनमें नित, दौल धवल[7] उपयोग रसावै ॥ थारा० ॥ ३ ॥

३६.

त्रिभुवनआनँदकारी जिन छवि, थारी नैननिहारी । त्रिभु० ॥ टेक ॥ ज्ञान अपूरव उदय भयो अव, या दिनकी वलिहारी । मो उर मोद वड़ो जु नाथ सो, कथा न जात उचारी । त्रिभु० ॥ १ ॥ सुन घनघोर मोरसुद ओर न, ज्यौं निधि पाय भिखारी । जाहि लखत झट झरत मोहरज, होय सो भवि अविकारी ॥ त्रिभु० ॥ २ ॥ जाकी सुंदरता सु पुरंदर-शोभ लजावनहारी । निज अनुभूति सुधाछवि पुलकित, वदन मदन

१ वचनोंमें । २ आपका वाणीरूप मेघ । ३ परपदार्थोंकी चाहरूपी अग्निको नेवाला है । ४ चैतन्यस्वरूप । ५ इन्द्रियजन्य सुखदुख जडका स्पर्श करते मेरा नहीं, मुझे सुखदुख नहीं होते । ६ इन्द्र । ७ विशुद्ध–निर्मल । इन्द्रकी शोभा ।

अरिहारी ॥ त्रिभु० ॥ ३ ॥ शूल दुकूल न वाला माला, मुनिमनमोद प्रसारी । अरुन न नैनन सैन भ्रमै न न, वंक न लंक सम्हारी ॥ त्रिभु० ॥ ४ ॥ तातैं विधिविभाव क्रोधादि न, लखियत हे जगतारी । पूजत पातकपुंज पलावत, ध्यावत शिवविस्तारी ॥ त्रिभु० ॥ ५ ॥ कामधेनु सुरतरु चिंतामनि, इकभव सुखकरतारी । तुम छवि लखत मोदतैं जो सुर, सो तुमपद दातारी ॥ त्रिभु० ॥ ६ ॥ महिमा कहत न लहत पार सुर,-गुरुहूकी बुधि हारी । और कहै किम दौल चहै इम, देहु दशा तुमधारी ॥ त्रिभु० ॥ ७ ॥

३७.

जिन छवि तेरी यह, धन जगतारन । जिन छवि० ॥ टेक ॥ मूल न फूल दुकूल त्रिशूल न, शमदमकारन भ्रमतमवारन । जिन० ॥ १ ॥ जाकी प्रभुताकी महिमातैं, सुरनधीशता लागत सार न । अवलोकत भविथोक मोख मग, चरत वरत निजनिधि उरधारन । जिन० ॥ २ ॥ जजत भजत अघ तौ को अचरज ? समकित पावन भावनकारन । तासु सेवफल एव चहत नित, दौलत जाके सुगुन उचारन ॥ जिन छ० ॥ ३ ॥

---

१ त्रिशूल । २ वस्त्र । ३ कमर । ४ जटा वा वल्कल । ५ फूलोंकी माला । ६ वस्त्र । ७ इन्द्रपणा । ८ आपके पूजनेसे यदि पाप भागते हैं, तो इसमें क्या आश्चर्य है ?

३८.

चलि सखि देखन नाभिरायघर, नाचत हरि[1] नटवा। चल० ॥ टेक ॥ अदभुत ताल मान शुभलययुत, चवंत[2] राग पटवा[3]। चल सखि० ॥ १ ॥ मनिमय नूपुरादिभूषनद्युति, युत सुरंग पटवा[4]। हरिकर नखन नखनपै[5] सुरतिय, पगफेरत कटवा[6] ॥ चल० ॥ २ ॥ किन्नर करधर वीनवजावत, लावत लय झटवाँ[7]। दौलत ताहि लखैं चख[8] तृपते, सूझत शिववटवा[9] ॥ चल० ॥ ३ ॥

३९.

आज गिरिराज निहारा, धनभाग हमारा । श्रीसम्मेद नाम है जाको, भूपर तीरथ भारा ॥ आज गिरि० ॥ टेक ॥ तहां वीस जिन मुक्ति पधारे, अवर मुनीश अपारा। आरजभूमिशिखामनि सोहै, सुरनरमुनि-मनप्यारा ॥ आज गिरि० ॥ १ ॥ तहँ थिर योग धार योगीसुर, निज-परतत्त्व विचारा। निज स्वभावमें लीन होयकर, सकल विभाव निवारा ॥ आज गिरि० ॥ २ ॥ जाहि जजत भवि भावनतैं जव, भवभवपातक टारा। जिनगुन धार धर्मधन संचो, भवदारिदहरतारा ॥ आज गिरि० ॥ ३ ॥ ईक[1] नभ[0] नव[9] ईक[1] वर्ष माघवदि, चौदश वासर सारा। माथ नाय जुतसाथ दौलने, जय जय शब्द उचारा ॥ आज गिरि० ॥ ४ ॥

---

१ इन्द्ररूपी नट। २ गाते हैं। ३ छै राग। ४ कपड़े। ५ इन्द्रके हाथोंके नखोंपर। ६ कमर। ७ शीघ्र ही। ८ नेत्र। ९ मोक्षमार्ग।

४०.

आज मैं परम पदारथ पायौ, प्रभुचरनन चित लायौ । आज० ॥ टेक ॥ अशुभ गये शुभ प्रगट भये हैं, सहजकल्पतरु छायौ । आज० ॥ १ ॥ ज्ञानशक्ति तप ऐसी जाकी, चेतनपद दरसायौ । आज० ॥ २ ॥ अष्टकर्म रिपु जोधा जीते, शिव अंकूर जमायौ । आज० ॥ ३ ॥

४१.

नेमिप्रभूकी श्यामवरन छवि, नैनन छाय रही ॥ टेक ॥ मणिमय तीनपीठपर अंबुज, तापर अधर ठही । नेमि० ॥ १ ॥ मार[1] मार तप धार जार विधि, केवलऋद्धि लही । चारतीस अतिशय दुतिमंडित, नवदुग[2]दोष नहीं । नेमि० ॥ २ ॥ जाहि सुरासुर नमत संतत[3], मस्तकतैं परस मही[4] । सुरगुरुवरअम्बुजप्रफुलावन अद्भुत न सही । नेमि० ॥ ३ ॥ धर अनुराग विलोकत जाको, दुरित नसै सब ही । दौलत महिमा अतुल जासकी, कापै जात कही । नेमि० ॥ ४ ॥

४२.

अहो नमि जिनप नित नमत शत[5] सुरप, कंदर्प[6]गज-दर्प[7]नाशन प्रवल पनलपन[8] । अहो० ॥ टेक ॥ नाथ,

---

१ कामदेवको मारके । २ अष्टादश । ३ निरन्तर । ४ पृथिवी । ५ सौ इन्द्र । ६ कामदेव । ७ गर्व । ८ पन=पाच हैं, लपन=मुख जिसके ऐसा पंचानन अर्थात् सिंह ।

तुम वानि पयपान जे करत भवि, नसै तिनकी जराम-रनजामनतपन । अहो नमि० ॥ १ ॥ अहो शिवभौन तुम चरनचिंतौन जे, करत तिन जरत भावी[1]दुखद भव-विपन[2] ॥ हे भुवनपाल तुम विशद[3]गुनमाल उर, धरैं ते लहैं टुक कालमें श्रेय[4]पन । अहो नमि० ॥ २ ॥ अहो गुनतूप[5] तुमरूप चखसहसकरि. लखत सन्तोष प्रापति भयौ नाकप[6] न ॥ अज[7], अकल[8], तज सकल दुखद परिग्रह कुग्रह[9], दुसहपरिसह सही धार व्रत सार पन । अहोनमि०॥३॥पाय केवल सकल लोक करवत लख्यौ, अख्यौ[10] वृष द्विधा सुनि नसत भ्रमतमझपन[11] । नीच कीचक कियौ मीचतैं[12] रहित जिम, दास[13]को पास ले नास भववास पन[14] । अहो नमि० ॥ ४ ॥

४३.

प्रभु[15] मोरी ऐसी बुधि कीजिये । रागदोषदावानलसे बच, समतारसमें भीजिये । प्रभु० ॥ टेक ॥ परमें त्याग अपनपो निजमें, लाग न कबहूं छीजिये[16] । कर्म कर्मफलमाहिं न राचत, ज्ञान सुधारस पीजिये ।

---

१ भविष्यत्में दुख देनेवाले । २ संसाररूपी वन । ३ स्वच्छ । ४ उत्तमता । ५ गुणोंके समूह । ६ इन्द्र । ७ नहीं है आगेको जन्म जिसका । ८ निष्पाप । ९ खोटे ग्रह । १० उपदेशदिया । ११ ढकन । १२ मृत्युसे । १३ 'दौलको' ऐसा भी पाठ है । १४ पञ्च परावर्त्तनरूप संसार । १५ इस पदके दौलतरामजीकृत होनेमें सन्देह है । १६ न्यून न होवे ।

प्रभु मोरी० ॥ १ ॥ सम्यगदर्शन ज्ञान चरननिधि, ताकी प्राप्ति करीजिये । मुझकारजके तुम बड़ कारन, अरज दौलकी लीजिये । प्रभु मोरी० ॥ २ ॥

४४.

वारी हो वधाई या शुभ साजै । विश्वसेन ऐरा[1]देवी-गृह, जिन[2]भवमंगल छाजै । वारी० ॥ टेक ॥ सब अमरेश [3]अशेष विभवजुत, नगर [4]नागपुर आये । नाग-द[5]त्त सुरइन्द्रवचनतैं, ऐरावत सज धाये । लखजोजन शतवदन वदनवसु, र[6]द प्रतिसर ठहराये । सर-सर सौ-पनचीस नलिनप्रति, पदम पचीस विराजै । वारी हो० ॥ १ ॥ पदमपदमप्रति अष्टोत्तरशत, ठने सुदल मनहारी । ते सब कोटि सताइसपै मुद; जुत नाचत सुरनारी । नवरसगान ठान काननको, उपजावत सुख भारी । वंक लै लावत लंक लचावत, दुति लखि दामनि लाजै । वारी हो० ॥ २ ॥ गोपँ गोर्पतिय जाय मायढिग, करी तास थुति सारी । सुखनिद्रा जननीको कर नमि, अंके लियो [10]जंगतारी । लै वसु मंगलद्रव्य दिश[11]सुरीं चलीं अग्र शुभकारी । हरखि [12]हरी चख सहस करी तब, जिनवर निरखनकाजै । वारी हो० ॥ ३ ॥ ता गजेन्द्रपै

---

१ शान्तिनाथ भगवानकी माता । २ भगवानके जन्मका उत्सव । ३ सम्पूर्ण । ४ हस्तिनापुर । ५ कुवेर । ६ दाँत । ७ गुप्त रूपसे । ८ इन्द्राणी । ९ गोदमें । १० भगवानको । ११ दिक्कन्यका देवियाँ । १२ इन्द्र ।

प्रथम इन्द्रने, श्रीजिनेन्द्र पधराये । द्वितियं छत्र दिय [2]तृतिय, तुरिय-हरि, मुद धरि चमर ढुराये । शेष[3]शक्र जयशब्द करत नभ, लंघ सुराचॅल छाये । पांडुशिला जिन थाप नची सचि, दुंदुभिकोटिक बाजै । वारी० ॥ ४ ॥ पुनि सुरेशने श्रीजिनेशको, जन्मन्हवन शुभ ठानो । हेमकुंभ सुरहाथहिं हाथन, क्षीरोदधिजल आनो । वद-[6]नउदरअवगाह एक चौ, वसु योजन परमानो । सहस-आठकर करि हरि जिनसिर, ढारत जयधुनि गाजै । वारी० ॥ ५ ॥ फिर हरिनाँरि सिंगार स्वामितन, जजे सुरा जस गाये । पूरवली विधिकर पयान मुद,-ठान पिताघर लाये । मनिमय आंगनमें कनकासन,-पै श्रीजिन पधराये । तांडव नृत्य कियो सुरनायक, शोभा सकल समाजै । वारी० ॥ ६ ॥ फिर हरि जगगुरुपि-तर तोष शान्तेश[10] घोष[11] जिन नामा । पुत्रजन्म उत्साह नगरमें, कियौ भूप अभिरामा । साध सकल निजनि-जनियोग सुर,-असुर गये निजधामा । त्रिपद[12]धारि जिनचारुचरनकी, दौलत करत सदा जै । वारी० ॥७॥

---

१ ऐशान इन्द्र । २ सानत्कुमार और माहेन्द्र । ३ बाकीके सब इन्द्र । ४ सुमेरु । ५ इन्द्राणी । ६ सोनेके कलशोंके मुख एक योजन, उदर चार योजन और-गहराई आठ योजन थी । ७ इन्द्राणी । ८ पूर्वकी । ९ जिन-भगवानके पिताकी स्तुतिकरके । १० शान्तिनाथनाम । ११ घोषणा करके । १२ तीर्थंकरत्व, चक्रवर्तित्व और कामदेवत्व इन तीन पदोंके धारी ।

४५.

हे जिन, तेरो सुजस उजागर, गावत हैं मुनिजन ज्ञानी। हे जिन० ॥ टेक ॥ दुर्जय मोह महाभट जाने, निजवश कीनें जगप्रानी। सो तुम ध्यानकृपान पानि-गहि, ततछिन ताकी थिति भानी। हे जिन० ॥ १ ॥ सुप्त अनादि अविद्या निद्रा, जिन जन निजसुधि विसरानी। ह्वै सचेत तिन निजनिधि पाई, श्रवन सुनी जब तुमवानी। हे जिन० ॥२॥ मंगलमय तू जगमें उत्तम, तुही शरन शिवमगदानी। तुवपद-सेवा परम औषधी, जन्मजरामृतगद[1] हानी। हे जिन० ॥ ३ ॥ तुमरे पंच-कल्यानकमाहीं, त्रिभुवन मोददशा ठानी। विष्णु, विदंवर, जिष्णु, दिगम्बर, बुध, शिव कह ध्यावत ध्यानी। हे जिन० ॥ ४ ॥ सर्व दर्वगुनपरजयपरनति, तुम सुबोधमें नहिं छानी। तातैं दौल दास उरआशा, प्रगट करो निजरससानी। हे जिन० ॥ ५ ॥

४६.

हे मन, तेरी को कुटेव यह, करनविषयमें[2] धावै है। हे मन० ॥ टेक ॥ इनहीके वश तू अनादितैं, निजस्वरूप न लखावै है। पराधीन छिन छीन समाकुल,

---

१ जन्ममरणजरारूपी रोग। २ इन्द्रियोंके विषयमें।

दुरगतिविपती चखावै है। हे मन० ॥ १ ॥ फरस विपयके कारन वारन, गरत परत दुख पावै है। रसना-इंद्रीवश झंप जलमें, कंटक कंठ छिदावै है। हे मन० ॥ २ ॥ गंधलोल पंकज मुंद्रितमें, अलि निजप्रान खपावै है। नयनविपयवश दीपशिखामें, अंग पतंग जरावै है। हे मन० ॥ ३ ॥ करनविपयवश हिरन अरनमें, खल-कर प्रान लुनावै है। दौलत तज इनको जिनको भज, यह गुरु शीख सुनावै है। हे० ॥ ४ ॥

४७

हो तुम शठ अविचारी जियरा, जिनवृप पाय वृथा खोवत हो। हो तुम० ॥ टेक ॥ पी अनादि मदमोह स्वगुननिधि, भूल अचेत नींद सोवत हो। हो तुम० ॥ ॥ १ ॥ स्वहित सीखवच सुगुरु पुकारत, क्यों न खोल उर-दृग जोवत हो। ज्ञान विसार विपयविप चाखत, सुरतरु जारि कनक बोवत हो ॥ हो तुम० ॥ २ ॥ स्वारथ सगे सकल जगकारन, क्यों निज पापभार ढोवत हो। नरभव सुकुल जैनवृप नौका, लहि निज क्यों भव-जल डोवत हो ॥ हो तुम० ॥ ३ ॥ पुण्यपापफल वा-तव्याधिवश, छिनमें हँसत छिनक रोवत हो। संयम-

१ हाथी। २ गढ़ेमें। ३ मछली। ४ वदकमलमें। ५ कानके विपयसे। ६ वनमें। ७ जिनधर्म। ८ हियेकी आखें। ९ कल्पवृक्षको जलाकर। १० धतूरा।

सलिल लेय निज उरके, कलिमल क्यों न दौल धोवत हो ॥ हो तुम० ॥ ४ ॥

४८.

हो तुम त्रिभुवनतारी हो जिन जी, मो भवजलधि क्यों न तारत हो ॥ टेक ॥ अंजन कियौ निरंजन तातैं, अधमउधार विरद धारत हो । हरि बराह मर्कट झट तारे, मेरी वेर ढील पारत हो । हो तुम० ॥ १ ॥ यौं वहु अधम उधारे तुम तौ, मैं कहा अधम न मुहि टारत हो । तुमको करनो परत न कछु शिव,-पथ लगाय भव्यनि तारत हो । हो तुम० ॥ २ ॥ तुम छवि निरखत सहज टरैं अघ, गुण चिंतत विधि—रज झारत हो । दौल न और चहै मो दीजे, जैसी आप भावनारत हो । हो तुम० ॥ ३ ॥

४९.

मान ले या सिख मोरी, झुकै मत भोगन ओरी । मान ले० ॥ टेक ॥ भोग भुजंगभोगसम[1] जानो, जिन इनसे रति जोरी । ते अनंत भव भीम[2] भरे दुख, परे अधोगति पौरी[3]; बँधे दृढ पातकडोरी[4] ॥ मान० ॥ १ ॥ इनको त्याग विरागी जे जन, भये ज्ञानवृषधोरी । तिन सुख लह्यौ अचल अविनाशी, भवफांसी दई तोरी;

१ सर्पके फणकी समान । २ भयानक । ३ पौर । ४ पापकी डोरमें ।

रमैं तिनसँग शिवगोरी। मान० ॥ २ ॥ भोगनकी अभिलाप हरनको, त्रिजगसंपदा थोरी। यातैं ज्ञानानंद दौल अब, पियौ पियूष कटोरी; मिटै भवव्याधि कठोरी ॥ मान० ॥ ३ ॥

५०.

छांड़ि दे या बुधि भोरी, वृथा तनसे रति जोरी। छांड़ि० ॥ टेक ॥ यह पर है न रहै थिर पोषत, सकल कुमलकी झोरी। यासौं ममता कर अनादितैं, बँधो कर्मकी डोरी, सहै दुख जलधि हिलोरी ॥ छांड़ि दे या बुधि भोरी; वृथा० ॥ १ ॥ यह जड़ है तू चेतन यौं ही, अपनावत बरजोरी। सम्यकदर्शन ज्ञान चरण निधि, ये हैं संपत तोरी, सदा विलसौ शिवगोरी ॥ छांड़ि दे या बुधि भोरी; वृथा० ॥ २ ॥ सुखिया भये सदीव जीव जिन, यासौं ममता तोरी। दौल सीख यह लीजे पीजे, ज्ञानपियूष कटोरी, मिटै परचाह कठोरी ॥ छांड़ि दे या बुधि भोरी; वृथा० ॥ ३ ॥

५१.

भाखूं हित तेरा, सुनि हो मन मेरा, भाखूं० ॥ ॥ टेक ॥ नरनरकादिक चारौं गतिमें, भटक्यो तू अधिकानी। परपरनतिमें प्रीति करी निज परनति नाहिं पिछानी, सहै दुख क्यों न घनेरा ॥ भाखूं० ॥ १ ॥

कुगुरुकुदेवकुपंथपंक फँसि, तैं वहु खेद लहायौ। शिव-सुख दैन जैन जगदीपक, सो तैं कवहुं न पायौ, मिट्यौ न अज्ञानअँधेरा॥ भाखूं० ॥ २ ॥ दर्शनज्ञानचरण तेरी निधि, सो विधिठगन[1] ठगी है। पांचों इंद्रिनके विषयनमें, तेरी वुद्धि लगी है, भया इनका तू चेरा॥ भाखूं० ॥ ३ ॥ तू जगजालविषैं वहु उरझ्यौ, अव कर ले सुरझेरा। दौलत नेमिचरनपंकजका, हो तू भ्रमर स[2]वेरा, नशै ज्यों दुख भवकेरा॥ भाखूं० ॥ ४ ॥

५२.

ऐसा मोही क्यों न अधोगति जावै, जाको जिनवानी न सुहावै। ऐसा० ॥ टेक ॥ वीतरागसे देव छोड़कर, भैरव यक्ष मनावै। कल्पलता दयालुता तजि हिंसा इन्द्रायनि वावै[3] ॥ ऐसा० ॥ १ ॥ रुचै न गुरु निर्ग्रन्थभेष वहु, परिग्रही गुरु भावै। परधन परतियको अभिलाषै, अशर्न[4] अशोधित[5] खावै॥ ऐसा० ॥२॥ परकी विभव देख ह्वै सोगी[6], परदुख हरख लहावै। धर्महेतु इक दाम न खरचै, उपँवन लक्ष वहावै[7] ॥ ऐसा० ॥ ३ ॥ ज्यौं गृहमें संचै वहु अघ त्यौं, वनहूमें उपजावै। अम्वर त्याग कहाय दिगम्वर, वाघम्वर तन छावै॥ ऐसा० ॥ ४ ॥ आरँभ तज शठ यंत्र मंत्र

---

१ कर्मरूपी ठगोंने। २ शीघ्र ही। ३ वोवै। ४ भोजन। ५ विना शोधा हुआ। ६ दुःखी। ७ वाग वनानेमें लाखों रुपये।

करि, जनपै पूज्य मनावै । धाम वाम तज दासी राखै, वाहिर मढ़ी वनावै ॥ ऐसा० ॥ ५ ॥ नाम धराय जती तपसी मन, विपयनिमें ललचावै । दौलत सो अनंत भव भटकै, औरनको भटकावै ॥ ऐसा० ॥ ६ ॥

५३

ऐसा योगी क्यों न अभयपद पावै, सो फेर न भवमें आवै । ऐसा० ॥ टेक ॥ संशय-विभ्रम-मोह-विवर्जित, स्वपरस्वरूप लखावै । लख परमातम चेतनको पुनि, कर्मकलंक मिटावै ॥ ऐसा योगी० ॥ १ ॥ भवतनभोगविरक्त[1] होय तन, नग्न सुभेप वनावै । मोहविकार निवार निजातम,-अनुभवमें चित लावै ॥ ऐसा योगी० ॥ २ ॥ त्रस-थावर-वध त्याग सदा परमाददशा छिटकावै । रागादिकवश झूठ न भाखै, तृणहु न अंदत[2] गहावै ॥ ऐसा योगी० ॥ ३ ॥ वाहिर नारि त्यागि अंतर चिदब्रह्म सुलीन रहावै । परमाकिंचन धर्मसार सो, द्विविध प्रसंग[3] वहावै ॥ ऐसा योगी० ॥ ४ ॥ पंच समिति त्रय गुप्ति पाल व्यवहार-चरनमग धावै । निश्चय सकलकपायरहित ह्वै, शुद्धातम थिर थावै ॥ ऐसा योगी० ॥ ५ ॥ कुंकुम पंक दास रिपु तृण मणि, व्याल माल सम भावै । आरत रौद्र कुध्यान विडारै, धर्मशुकलको ध्यावै ॥ ऐसा योगी० ॥ ६ ॥ जाके सु-

---

१ ससार और देह भोगोंसे विरक्त । २ विना दिया । ३ दो प्रकारका परिग्रह ।

खसमाजकी महिमा, कहत इन्द्र अकुलावै। दौल-तासपद होय दास सो, अविचलऋद्धि लहावै॥ ऐसा योगी०॥ ७॥

५४.

लखो जी या जिय भोरेकी बातैं, नित करत अहित हित घातैं। लखो जी०॥ टेक॥ जिन गनधर मुनि देशव्रती समकिती सुखी नित जातैं। सो पय ज्ञान न पान करत न, अघाँत[1] विषयविष खातैं॥ लखो०॥१॥ दुखस्वरूप दुखफलद[2] जलदसम[3], टिकत न छिनक बिलातैं। तजत न जगत न भजत पतित नित, रचत न फिरत तहांतैं॥ लखो०॥ २॥ देह-गेह-धन-नेह ठान अति, अघ संचत दिनरातैं। कुगति विपतिफलकी न भीत, निश्चिंत प्रमाददशातैं॥ लखो०॥ ३॥ कबहुं न होय आपनो पर, द्रव्यादि पृथक चतुधातैं[4]। पै अपनाय लहत दुख शठ नभ,—हतन[5] चलावत लातैं॥ लखो०॥ ४॥ शिवगृहद्वार सार नरभव यह, लहि दश दुर्लभतातैं। खोवत ज्यौं मनि काग उड़ावत, रोवत रंकपनातैं॥ लखो०॥ ५॥ चिदानंद निर्द्वंद स्वपद तज, अपद विपद-पद रातैं[6]। कहत-सुशिख गुरु गहत नहीं उर, चहत न सुख समतातैं॥ लखो०॥ ६॥

---

१ तृप्त होता है। २ दुखरूप फल देनेवाला। ३ बादल। ४ द्रव्यक्षेत्रादि स्वचतुष्टयसे। ५ आकाशके घात करनेको। ६ विपतिस्थानमें लवलीन।

जैनवैन सुन भवि वहु भव हर, छूटे द्वंददशातैं । तिनकी सुकथा सुनत न सुनत[1] न, आतमवोधकलातैं ॥ लखो० ॥ ७ ॥ जे जन समुझि ज्ञानदृगचारित, पावन पयवर्षातैं । तापविमोह हर्‍यौ तिनको जस, दौल त्रिभोन विख्यातैं ॥ लखो० ॥ ८ ॥

५५.

/ सुनो जिया ये सतगुरुकी वातैं, हित कहत दयाल दयातैं । सुनो० ॥ टेक ॥ यह तन आन अचेतन है तू, चेतन मिलत न यातैं । तदपि पिछान एक आतमको, तजत न हठ शठतातैं ॥ सुनो० ॥ १ ॥ चहुंगति फिरत भरत ममताको, विपय महाविप खातैं । तदपि न तजत न रजंत[2] अभागे, दृगव्रतवुद्धिसुधातैं[3] ॥ सुनो० ॥ २ ॥ मात तात सुत भ्रात स्वजन तुझ, साथी स्वारथ नातैं । तू इनकाज साज गृहको सव, ज्ञानादिक मत घातै ॥ सुनो० ॥ ३ ॥ तन धन भोग सँजोग सुपनसम, वार न लगत विलातैं । ममत न कर भ्रम तज तू भ्राता, अनुभव-ज्ञान-कलातैं ॥ सुनो० ॥ ४ ॥ दुर्लभ नरभव सुथल सुकुल है, जिन उपदेश लहा तैं । दौल तजो मनसौं ममता ज्यों, निवड़ो द्वंद दशातैं ॥ सुनो० ॥ ५ ॥

---

१ मनन नहीं करता । २ रजायमान । ३ दर्शनज्ञानचारित्ररूपी अमृतसे ।

५६.

मोही जीव भरमतमतैं नाहिं, वस्तुस्वरूप लखै है जैसैं। मोही० ॥ टेक ॥ जे जे जड़ चेतनकी परनति, ते अनिवार[1] परनवैं वैसैं[2]। वृथा दुखी शठ कर विकलप यौं, नाहिं परिनवैं परिनवैं ऐसैं[3] ॥ मोही० ॥ १ ॥ अशुचि सरोग समल जड़मूरत, लखत विलात गगनघन जैसैं। सो तन ताहि निहार अपनपो, चहत अवाध रहै थिर कैसैं ॥ मोही० ॥ २ ॥ सुत-तिय-वंधु-वियोगयोग यौं, ज्यौं सराय जन निकसै[4] पैसैं[5] ॥ विलखत हरखत शठ अपने लखि, रोवत हँसत मत्तजन जैसैं ॥ मोही० ॥ ३ ॥ जिन-रवि-वैन-किरन लहि जिन निज, रूप सुभिन्न कियौ परमैंसैं ॥ सो जगमौल दौलको चिर थित, मोहविलास निकास हृदैसैं ॥ मोही० ॥ ४ ॥

५७.

ज्ञानी जीव निवार भरमतम, वस्तुस्वरूप विचारत ऐसैं। ज्ञानी० ॥ टेक ॥ सुत तिय वंधु धनादि प्रगट पर, ये मुझतैं हैं भिन्नप्रदेशैं। इनकी परनति है इन आश्रित, जो इन भाव परनवैं वैसैं ॥ ज्ञानी० ॥ १ ॥ देह

---

१ जिसका निवारण नहीं हो सकता। २ जैसा परिणमन होना चाहिये वैसा। ३ इसप्रकार नहीं परिणमै, किन्तु इसप्रकार अपनी इच्छानुसार परिणमैं। ४ निकलैं। ५ प्रवेश करैं।

अचेतन चेतन मैं इन, परनति होय एकसी कैसैं। पूरनगलन[1] स्वभाव धरै तन, मैं अज अचल अमल नभ जैसैं ॥ ज्ञानी० ॥ २ ॥ पर परिनमन न इष्ट अनिष्ट न, वृथा रागरुप द्वंद्व भयेसैं । नसै ज्ञान निज फँसै वंधमें, मुक्त होय समभाव लयेसैं ॥ ज्ञानी० ॥ ३ ॥ विषयचाहदवदाह नशै नहिं, विन निज सुधासिंधुमें पैसैं । अव जिनवैन सुने श्रवननतैं, मिटै विभाव करूं विधि तैसैं ॥ ज्ञानी० ॥ ४ ॥ ऐसो अवसर कठिन पाय अव, निजहितहेत विलंव करेसैं । पछताओ वहु होय सयाने, चेतत दौल छुटो भवभैसैं ॥ ज्ञानी० ॥ ५ ॥

५८.

अपनी सुधि भूल आप, आप दुख उपायौ, ज्यौं शुक नभचाल विसरि नलिनी लटकायौ ॥ अपनी० ॥ टेक ॥ चेतन अविरुद्ध शुद्ध, दरशवोधमय विशुद्ध, तजि जड़-रस-फरस-रूप, पुद्गल अपनायौ । अपनी० ॥ ॥ १ ॥ इन्द्रियसुखदुखमें नित्त, पाग रागरुखमें चित्त, दायकभवविपतिवृंद, वंधको वढ़ायौ । अपनी० ॥ २ ॥ चाहदाह दाहै, त्यागौ न ताह चाहै, समतासुधा न गाहै जिन, निकट जो वतायौ । अपनी० ॥ ३ ॥ मानुपभव सुकुल पाय, जिनवरशासन लहाय, दौल निज-स्वभाव भज, अनादि जो न ध्यायौ । अपनी० ॥ ४ ॥

---

१ पूरण होने और गलन होनेरूप स्वभाववाला पुद्गल होता है ।

५९.

जीव, तू अनादिहीतैं भूल्यौ शिवगैलवा[1] । जीव०॥ टेक ॥ मोहमदवार पियौ, स्वपद विसार दियौ, पर अपनाय लियौ, इंद्रिसुखमें रचियौ, भवतैं न भियौन तजियौ मनमैलवा । जीव० ॥१॥ मिथ्या ज्ञान आचरन, धरि कर कुमरन, तीन लोककी धरन, तामें कियो है फिरन, पायौ न शरन न लहायौ सुखशैलवा । जीव० ॥ २ ॥ अब नरभव पायौ, सुथल सुकुल आयौ, जिन उपदेश भायौ, दौल झट छिटकायौ, परपरनति दुखदायिनी चुरैलवा[2] । जीव० ॥ ३ ॥

६०.

आपा नहिं[3] जाना तूने, कैसा ज्ञानधारी रे ॥ टेक ॥ देहाश्रित करि क्रिया आपको, मानत शिवमगचारी रे । आपा० ॥ १ ॥ निजनिवेदविन[4] घोर परीसह, विफल कही जिन सारी रे । आपा० ॥ २ ॥ शिव चाहै तो द्विविधकर्मतैं[5], कर निजपरनति न्यारी रे । आपा० ॥ ३ ॥ दौलत जिन निजभाव पिछान्यौ, तिन भवविपति विदारी रे । आ० ॥ ४ ॥

६१.

आतमरूप अनूपम अद्भुत, याहि लखैं भवसिंधु त-

१ मोक्षका मार्ग । २ चुडैल । ३ 'न पिछाना' ऐसा भी पाठ है । ४ अपनी आत्माका स्वरूप जाने विना । ५ 'द्विविधधर्म कर' ऐसा भी पाठ है ।

रो। आ० ॥ टेक ॥ अल्पकालमें भरत चक्रधर, निज आतमको ध्याय खरो। केवलज्ञान पाय भवि वोधे, ततछिन पायौ लोकशिरो[1] ॥ आ० ॥ १ ॥ या विन समुझे द्रव्यलिङ्गि मुनि, उग्र[2] तपनकर भार भरो। नवग्रीवकपर्यन्त जाय चिर, फेर भैवार्णवमाहिं[3] परो ॥ आत० ॥ २ ॥ सम्यग्दर्शन ज्ञानचरनतप, येहि जगतमें सार नैरो[4]। पूरव शिवको गये जाहिं अव, फिर जैहैं यह नियत[5] करो ॥ आ० ॥ ३ ॥ कोटि ग्रन्थको सार यही है, येही जिनवानी उचरो। दौल ध्याय अपने आतमको, मुक्तिरमा तव वेग वरो ॥ आ० ॥ ४ ॥

६२.

/ आप भ्रमविनाश आप आप जान पायौ, कर्णधृत सुवर्ण जिमि चितार चैन थायौ। आप० ॥ टेक ॥ मेरो तन तनमय तन, मेरो मैं तनको त्रिकाल यौं कुवोध नश सुवोधभान जायौ ॥ आप० ॥ १ ॥ यह सुजैनवैन ऐन, चिंतत पुनि पुनि सुनैन[6], प्रगटो अव भेद निज[7], निवेदगुन वढ़ायौ। आप० ॥ २ ॥ यौं ही चित अचित मिश्र, ज्ञेय ना अहेय हेय, इंधन धनंज[8] जैसे, स्वांमियोग[9] गायौ। आप० ॥ ३ ॥ भँमर पोत[10]

---

१ मोक्षशिखर=सिद्धशिला। २ घोर। ३ भवसमुद्रमें। ४ हे पुरुषो। ५ निश्चय। ६ सुनयोंसे। ७ आत्मज्ञान। ८ अग्नि। ९ उत्तम योग। १० जहाज।

छुटत झटति, वाछित तट निकटत जिमि, मोह राग-रुख हर जिय, शिवतट निकटायौ । आप० ॥ ४ ॥ विमल सौख्यमय सदीव, मैं हू मैं नहिं अजीव, जोत होत रज्जुमय, भुजंग भय भगायौ । आप० ॥ ५ ॥ यौं ही जिनचंद सुगुन, चिंतत परमारथ चुन, दौल भाग जागो जव, अल्पपूर्व आयौ । आप० ॥ ६ ॥

६३.

विषयोंदा मद भानै, ऐसा है कोई वे ॥ टेक ॥ विषय दुःख अर दुखफल तिनको, यौं नित चित्त न ठानै । विषयोंदा० ॥ १ ॥ अनुपयोग उपयोग स्वरूपी, तनचेतनको मानै । विषयोंदा० ॥ २ ॥ वरनादिक रागादि भावतैं, भिन्नरूप तिन जानैं । विषयोंदा० ॥ ॥ ३ ॥ स्वपर जान रुषराग हान, निजमें निज परनति सानै । विषयोंदा० ॥ ४ ॥ अंतर वाहरको परिग्रह तजि, दौल बसै शिवथानै । विषयोंदा० ॥ ५ ॥

६४.

और सबै जगद्वन्द मिटावो, लो लावो जिन आगमओरी । और० ॥ टेक ॥ है असार जगद्वंद्व वंधकर, यह कछु गरज न सारत तोरी । कमला चपला यौवन सुरधनु, स्वजन पथिकजन क्यों रति जोरी ॥ और०

१ शीघ्र ही । २ विषयोंका (पंजाबी) । ३ लक्ष्मी । ४ विजली । ५ इन्द्रधनुष ।

॥ १ ॥ विषयकषाय दुखद दोनों भव, इनतैं तोर नेह-की डोरी। परद्रव्यनको तू अपनावत, क्यों न तजै ऐसी बुधि भोरी ॥ और० ॥ २ ॥ वीत जाय सागर-थिति सुरकी, नरपरजायतनी अति थोरी। अवसर पाय दौल अव चूको, फिर न मिलै मणि सागरवोरी ॥ और० ॥ ३ ॥

६५

और अवै न कुदेव सुहावैं, जिन थाके चरनन रति जोरी। और० ॥ टेक ॥ कामकोहवश गहैं अशन असि, अंक[1] निशंक धरैं तिय गोरी। औरनके किम भाव सुधारैं, आप कुभाव-भारधर-धोरी। और० ॥ १ ॥ तुम विनमोह अकोहछोहविन[2], छके शांतरस पीय कटोरी। तुम तज सेयँ[3] अमेयँ[4] भरी जो, जानत हो विपदा सव मोरी। और० ॥ २ ॥ तुम तज तिनैं भजै शठ जो सो, दाख न चाखत खात निमोरी। हे जगतार उधार दौलको, निकट विकट भवजलधि[5] हिलोरी ॥ और० ॥ ३ ॥

६६.

कवधों मिलैं मोहि श्रीगुरु मुनिवर, करि हैं भवद-धि पारा हो। कवधों० ॥ टेर ॥ भोगउदास जोग जिन

१ गोदमें। २ क्रोधक्षोमरहित। ३ सेवा। ४ अपरिमाण। ५ भवसमुद्रकी लहरें।

लीनों, छांड़ि परिग्रहभारा हो। इंद्रिय दमन वमन मद कीनो, विषय कषाय निवारा हो ॥ कवधों० ॥ १ ॥ कंचन काच बराबर जिनके, निंदक वंदक [1]सारा हो। दुर्धर तप तपि सम्यक् निज घर, मनवचतनकर धारा हो ॥ कवधों० ॥ २ ॥ ग्रीषम गिरि हिम सरितातीरै, पावस तरुतर ठारा हो। करुणाभीनें[2] चीन त्रसथावर, ईर्यापंथ समारा हो ॥ कवधों० ॥ ३ ॥ [3]मार मार [4]व्रत धार शील दृढ़, मोह महामल टारा हो। मास छमास उपास वास वन, प्रासुक करत अहारा हो ॥ कवधों० ॥ ४ ॥ आरत[5]रौद्र[6]लेश नहिं जिनके, धर्म[7] [8]शुकल चित धारा हो। ध्यानारूढ़ गूढ़ निजआतम, शुधउपयोग विचारा हो ॥ कवधों० ॥ ५ ॥ आप तरहिं औरनको तारहिं, भवजलसिंधु अपारा हो। दौलत ऐसे जैनजतिनको, नितप्रति धोक हमारा हो ॥ कवधों० ॥ ६ ॥

६७.

कुमति कुनारि नहीं है भली रे, सुमति नारि सुंदर गुनवाली; कुमति० ॥ टेक ॥ वासौं विरचि रचौ नित यासौं, जो पावो शिवधाम गली रे। वह कुबजा

---

१ एकसे। २ 'लीन' ऐसा भी पाठ है। ३ कामदेवको मारकर। ४ "धर तप तपि समकित गहि निज चित, करि मनवचन सारा हो। मासमास उपवास वासवन" ऐसा भी पाठ है। ५ आर्तध्यान। ६ रौद्रध्यान। ७ धर्मध्यान। ८ शुक्लध्यान।

दुखदा यह राधा, बाधा टारन करन रली रे ॥ कुमति० ॥ १ ॥ वह कारी परसौं रति ठानत, मानत नाहिं न सीख भली रे । यह गोरी चिंद्गुणसहचारिनि, रमत सदा स्वसमाधि–थली रे ॥ कुमति० ॥ २ ॥ वा सँग कुथल कुयोनि वस्यौ नित, तहाँ महादुख–वेल फली रे । या सँग रसिक भविनकी निजमें, परिनति दौल भई न चली रे ॥ कुमति० ॥ ३ ॥

६८.

गुरु कहत सीख इमि वार वार, विषसम विषयनको टार टार ॥ गुरु० ॥ टेक ॥ इन सेवत अनादि दुख पायौ, जनम मरन बहु धार धार । गुरु० ॥ १ ॥ कर्माश्रित बाधाजुत फांसी, बंध बढ़ावन द्वंदकार । गुरु० ॥ ॥ २ ॥ ये न इंद्रिके तृप्तिहेतु जिमि, तिसँ न बुझावत क्षारवार । गुरु० ॥ ३ ॥ इनमें सुख कलपना अबुधके, बुधजन मानत दुख प्रचार । गुरु० ॥ ४ ॥ इन तजि ज्ञानपियूष चख्यौ तिन, दौल लही भववार पार । गुरु० ॥ ५

६९.

घड़ि घड़ि पल पल छिन छिन निशदिन, प्रभुजीका सुमरन कर लै रे । घड़ि० ॥ टेक ॥ प्रभुसुमरेतैं पाप कटत हैं, जनममरनदुख हर लै रे । घड़ि घड़ि० ॥१॥

---

१ ज्ञानगुणसहचारिणी । २ फिर चलायमान न हुई । ३ तृषा–प्यास । ४ खारापानी ।

मनवचकाय लगाय चरन चित, ज्ञान हियेमें धर लै रे। घड़ि घड़ि० ॥ २ ॥ दौलतराम, धर्मनौका चढ़ि, भवसागरतैं तिर लै रे। घड़ि घड़ि० ॥ ३ ॥

७०.

चिन्मूरत दृग्धारीकी मोहि, रीति लगत है अटापटी[1]। चिन्मू० ॥ टेक ॥ वाहिर नारकिकृत दुख भोगै, अंतर सुखरस गटागटी। रमत अनेक सुरनि सँग पै तिस, परनतितैं नित हटाहटी[2] ॥ चिन्मू० ॥ १ ॥ ज्ञानविरागशक्तितैं विधिफल[3], भोगत पै विधि घटाघटी। सदननिवासी तदपि उदासी, तातैं आस्रव छटाछटी ॥ चिन्मू० ॥ २ ॥ जे भवहेतु अबुधके ते तस, करत बन्धकी झटाझटी। नारक पशु तिय पंढ[5] विकलत्रय, प्रकृतिनकी ह्वै कटाकटी[4] ॥ चिन्मू० ॥ ३ ॥ संयम धर न सकै पै संयम, धारनकी उर चटाचटी। तासु सुयशगुनकी दौलतके, लगी रहै नित रटारटी ॥ चिन्मू० ॥४॥

७१.

चेतन यह बुधि कौन सयानी, कही सुगुरु हितसीख न मानी ॥ टेक ॥ कठिन काकताली[6] ज्यौं पायौ, नरभव सुकुल श्रवण जिनवानी। चेतन० ॥ १ ॥ भूमि

---

१ अटपटी। २ दूरपना। ३ कर्मफल। ४ न्यूनपना। ५ नपुंसक। ६ काकतालीय न्यायसे अर्थात् जैसे ताड़वृक्षसे ताड़फलका टूटना और कागका उसे आकाशमें ही पा लेना कठिन है वैसे।

न होत चादनीकी ज्यौं, त्यौं नहिं धनी ज्ञेयको ज्ञानी। वस्तुरूप यौं तू यौं ही शठ, हटकर पकरत सोंज विरानी ॥ चेतन० ॥ २ ॥ ज्ञानी होय अज्ञान राग-रुप,-कर निज सहज स्वच्छता हानी । इन्द्रिय जड़ तिन विपय अचेतन, तहां अनिष्ट इष्टता ठानी ॥ चेतन० ॥ ३ ॥ चाहै सुख, दुख ही अवगाहै, अब सुनि विधि जो है सुखदानी । दौल आपकरि आप आपमें, ध्याय लाय लय समरससानी ॥ चेतन० ॥ ४ ॥

७२.

चेतन कौन अनीति गही रे, न मानै सुगुरु कही रे । चेतन० ॥ जिन विपयनवश वहु दुख पायौ, तिनसौं प्रीति ठही रे । चेतन० ॥ १ ॥ चिन्मय है देहादि जड़नसौं, तो मति पागि रही रे । सम्यग्दर्शनज्ञान भाव निज, तिनकों गहत नहीं रे ॥ चेतन० ॥ २ ॥ जिनवृप पाय विहाय रागरुप, निजहित हेत यहीं रे । दौलत जिन यह सीख धरी उर, तिन शिव सहज लही रे ॥ चेतन० ॥ ३ ॥

७३.

चेतन तैं यौं ही भ्रम ठान्यो, ज्यौं मृग मृगतृष्णा जल जान्यो । चेतन० ॥ टेक ॥ ज्यौं निशितममें निरख

१ 'निजनुघासुरुचि गहि' ऐसा भी पाठ है।

जेवरी, भुजग मान नर भय उर आन्यो। चेतन० ॥१॥ ज्यौं कुध्यान वश महिप मान निज, फँसि नर उरमाहीं अकुलान्यो। त्यौं चिर मोह अविद्या पेर्‍यो, तेरो तैं ही रूप भुलान्यो ॥ चेतन० ॥ २ ॥ तोय तेल ज्यौं मेल न तनको, उपज खपजमें सुखदुख मान्यो। पुनि परभावनको करता ह्वै, तैं तिनको निज कर्म पिछान्यो ॥ चेतन० ॥ ३ ॥ नरभव सुथल सुकुल जिनवानी, काललब्धिबल योग मिलान्यो। दौल सहज भज उदासीनता, तोष-रोष दुखकोष जु भान्यो ॥ चेतन० ॥ ४ ॥

७४.

चेतन अब धरि सहजसमाधि, जातैं यह विनशै भवव्याधि। चेतन० ॥ टेक ॥ मोह ठगौरी खायके रे, परको आपा जान। भूल निजातम ऋद्धिको तैं, पाये दुःख महान ॥ चेतन० ॥ १ ॥ सादि अनादि निगोद दोयमें, पर्‍यो कर्मवश जाय। श्वासउसासमँझार तहां भव, मरन अठारह थाय ॥ चेतन० ॥ २ ॥ कालअनंत तहाँ यौं वीत्यो, जब भइ मंद कषाय। भू जल अनिल अनलैं पुन तरु ह्वै, काल असंख्य गमाय ॥ चेतन० ॥ ३ ॥ क्रमक्रम निकसि कठिन तैं पाई, शंखादिक परजाय। जल थल खचर होय अघ ठाने, तस

१ विनाशमें। २ रागद्वेष। ३ नष्ट किया। ४ वायुकाय। ५ अग्निकाय।

वश श्वभ्र लहाय ॥ चेतन० ॥ ४ ॥ तित सागरलों बहु दुख पाये, निकस कबहुं नर थाय । गर्भ जन्मशिशु तरुणवृद्धदुख, सहे कहे नहिं जाय । चेतन० ॥ ५ ॥ कबहूं किंचित पुण्यपाकतैं चउविधि देव कहाय । विषयआश मन त्रास लही तहँ, मरनसमय विललाय ॥ चेतन० ॥ ६ ॥ यौं अपार भवखारवारमें, भ्रम्यो अनंते काल । दौलत अब निजभाव-नाव चढ़ि, लै भवाब्धिकी पाल ॥ चेतन० ॥ ७ ॥

७५.

जिन रागदोषत्यागा वह सतगुरू हमारा। जिन राग० ॥ टेक ॥ तज राजरिद्ध तृणवत निज काज सँभारा। जिन राग० ॥ १ ॥ रहता है वह वनखंडमे, धरि ध्यान कुठारा। जिन मोह महा तरुको, जड़मूल उखारा ॥ जिन राग० ॥ २ ॥ सर्वांग तज परिग्रह, दिगअंबर धारा। अनंतज्ञानगुनसमुद्र, चारित्र भँडारा ॥ जिन राग० ॥ ३ ॥ शुक्लाग्निको प्रजालके वसु कानन जारा। ऐसे गुरूको दौल है, नमोऽस्तु हमारा ॥ जिनराग० ॥४॥

७६.

चिदरायगुन सुनो सुनो. प्रशस्त गुरुगिरा। समस्त तज विभाव, हो स्वकीयमें थिरा। चिद० ॥ टेक ॥

---

१ नरक। २ यह पद दौलतरामजीका नहीं मालूम होता, इसका पाठ भी नटखड है।

निजभावके लखाव विन, भवाब्धिमें परा। जामन मरन जरा त्रिदोष,-अग्निमें जरा ॥ चिद० ॥ १ ॥ फिर सादि औ अनादि दो, निगोदमें परा। तहँ अंकके असंख्य-भाग, ज्ञान ऊवरा ॥ चिद० ॥ २ ॥ तहां भव अंतर मुहूर्तके, कहे गनेश्वरा। छयासठ सहस त्रिशत छतीस, जन्म धर मरा ॥ चिद० ॥ ३ ॥ यौं वशि अनंतकाल फिर, तहांतैं नीसरा। भूजल अनिल अनल प्रतेक, तरुमें तन धरा ॥ चिद० ॥ ४ ॥ अनुंधरीसु कुंथु काण-मच्छ अवतरा। जल थल खचर कुनर नरक, असुर उप-ज मरा ॥ चिद० ॥ ५ ॥ अबके सुथल सुकुल सुसंग, बोध लहि खरा। दौलत त्रिरत्न साध लाध, पद अनु-त्तरा ॥ चिद० ॥ ६ ॥

७७.

चित चिंतकैं चिदेश[1] कब, अशेष[2] पर[3] वमूं[4]। दुखदा अपार विधि[5] दुचार[6],-की चमूं[7] दमूं ॥ चित चिं० ॥ टेक ॥ तजि पुण्यपाप थाप आप, आपमें[8] रमूं[9]। कब राग-आग शर्म-बाग[10],-दागनी शमूं[11] ॥ चित चिंतकैं० ॥ १ ॥ दृग[12]ज्ञानभानतैं मिथ्या, अज्ञानतम दमूं। कब

१ आत्मा। २ सम्पूर्ण। ३ परपदार्थ। ४ वमन कर दूं–छोड़ दूं। ५ कर्म। ६ दो चार अर्थात् आठ। ७ फौज। ८ आत्माने। ९ रमण करूं। १० कल्याणरूप बागकी जलानेवाली। ११ शमन करूं, शांत करूं। १२ सम्यग् दर्शन और ज्ञानरूपी सूर्यसे।

सर्व जीव प्राणिभूत, सत्त्वसौं छमूं ॥ चित चिंतकैं० ॥ २ ॥ जल मल्ललिप्त-कल सुकल-, सुवल्ल परिनमूं । दलके त्रिशल्लमल्ल कव, अटल्लपद पमूं ॥ चित चिंतकैं० ॥ ३ ॥ कव ध्याय अज अमरको फिर न, भवविपिन भमूं । जिन पूर कौल दौलको यह, हेतु हौं नमूं ॥ चित चिंतकैं० ॥ ४ ॥

७८.

जिन छवि लखत यह बुधि भयी । जिन० ॥ टेक ॥ मैं न देह चिदंकमय तन, जड़ फरसरसमयी । जिनछवि० ॥ १ ॥ अशुभशुभफल कर्म दुखसुख, पृथकता सव गयी । रागदोषविभावचालित, ज्ञानता थिर थयी ॥ जिनछवि० ॥ २ ॥ परिगहन आकुलता दहन, विनशि शमता लयी । दौल पूरवअलभ आनंद, लह्यो भवथिति जयी ॥ जिन० ॥ ३ ॥

७९.

जिनवैन सुनत, मोरी भूल भगी । जिनवैन० ॥ टेक ॥ कर्मस्वभाव भाव चेतनको, भिन्न पिछानन सुमति जगी । जिन० ॥ १ ॥ जिन अनुभूति सहज ज्ञायकता, सो चिर रुप-तुप-मैल-पगी । स्यादवाद-धुनि-निर्मल-

---

१ दशप्राणमयी । २ जड । ३ शरीर । ४ शुक्लध्यानके वलसे । ५ माया, मिथ्यात, निदानरूप तीन शल्यरूपी पहलवानोंको । ६ मोक्षपद । ७ प्रतिज्ञा । ८ पूर्वमें जिसका लाभ नहीं हुआ ऐसा ।

जलतैं, विमल भई समभाव लगी ॥ जिन० ॥ २ ॥ संशयमोहभरमता विघटी, प्रगटी आतमसोंज सगी। दौल अपूरव मंगल पायो, शिवसुख लेन हौंस उमगी॥ जिन० ॥ ३ ॥

८०.

जिनवानी जान सुजान रे। जिनवानी० ॥ टेक ॥ लाग रही चिरतैं विभावता, ताको कर अवसान रे। जिनवानी० ॥ १ ॥ द्रव्यक्षेत्र अरु कालभावकी, कथनीको पहिचान रे। जाहि पिछाने स्वपरभेद सव, जाने परत निदान रे। जिनवानी० ॥ २ ॥ पूरव जिन जानी तिनहीने, भानी संसृतवान रे। अव जानैं अरु जानैंगे जे, ते पावैं शिवथान रे॥ जिनवानी० ॥ ३ ॥ कह 'तुपमाप' मुनी शिवभूती, पायो केवल-ज्ञान रे। यौं लखि दौलत सतत करो भवि, चिद्वचनामृतपान रे॥ जिनवानी० ॥ ४ ॥

८१.

जम आन अचानक दावैगा। जम आन० ॥ टेक ॥ छिनछिन कटत घटत थिति ज्यौं जल, अंजुलिको झर जावैगा। जम आन० ॥ १ ॥ जन्म तालतरुतैं पर

---

१ निजपरणति। २ नाश की। ३ भ्रमणकी आदत। ४ आयु। ५ जन्मरूपी ताडवृक्षसे पड़ करके जीवरूपी फल वीचमें कवतक रहेगा? वह तो नीचे पड़ेगा ही, अर्थात् मरेगा ही।

जियफल, कौंल्ग वीच रहावैगा। क्यौं न विचार करै नर आखिर, मरन महीमे आवैगा॥ जम आन० ॥२॥ सोवत मृत जागत जीवत ही, श्वासा जो थिर थावैगा। जैसैं कोऊ छिपै सदासौं, कवहूं अवशि पैलावैगा॥ जम आन० ॥ ३ ॥ कहूं कवहुं कैसें हू कोऊ, अंतकेंसे न वचावैगा। सम्यकज्ञानपियूष पियेसौं, दौल अमरपद पावैगा॥ जम आन० ॥ ४ ॥

८२.

छांड़त क्यौं नहिं रे, हे नर! रीति अयानी। वार-वार सिख देत सुगुरु यह, तू दे आनाकानी॥ छांड़-त०॥ टेक ॥ विषय न तजत न भजत वोध व्रत, दुखसुखजाति न जानी। शर्म चहै न लहै शठ ज्यौं घृतहेत विलोवत पानी॥ छांड़त० ॥ १ ॥ तन धन सदन स्वजनजन तुझसौं, ये परजाय विरानी। इन परिनमनविनशउपजन सो, तैं दुख सुखकर मानी॥ छांड़त० ॥ २ ॥ इस अज्ञानतैं चिरदुख पाये, तिनकी अकथ कहानी। ताको तज दृग-ज्ञान-चरन भज, निजपरनति शिवदानी॥ छांड़त० ॥ ३ ॥ यह दुर्लभ नरभव सुसंग लहि, तत्त्व-लखावन वानी। दौल न कर अव परमें ममता, घर समता सुखदानी॥ छांड़त० ॥४॥

---

१ भागेगा। २ जमराजसे। ३ सम्यग्ज्ञानरूपी अमृत।

८३.

राचि रह्यो परमाहिं तू अपनो रूप न जानै रे। राचि रह्यो० टेक ॥ अविचल चिनमूरत विनमूरत, सुखी होत तस ठानै रे। राचि रह्यो० ॥ १ ॥ तन धन भ्रात तात सुत जननी, तू इनको निज जानै रे। ये पर इनहिं वियोगयोगमें, यौं ही सुख दुख मानै रे॥ राचि० ॥ २ ॥ चाह न पाये पाये तृष्णा, सेवत ज्ञान जघानै रे॥ विपतिखेत विधिबंधहेत पै, जान विषय रस खानै रे॥ राचि० ॥ ३ ॥ नरभव जिनश्रुतश्रवण पाय अब, कर निज सुहित सयानै रे। दौलत आतम-ज्ञान-सुधारस, पीवो सुगुरु बखानै रे॥ राचि रह्यो०॥४॥

८४.

तू काहेको करत रति तनमें, यह अहितमूल जिम कारासदन[1]। तू काहेको० ॥ टेक ॥ चरमपिहित[2] पल[3]-रुधिर-लिप्त मल,-द्वारस्रवै छिनछिनमें। तू काहेको० ॥ १ ॥ आयु-निगड़[4]फंसि विपति भरै सो, क्यों न चितारत मनमें। तू काहेको० ॥ २ ॥ सुचरन लाग त्याग अब याको; जो न भ्रमै भववनमें। तू काहेको० ॥ ३ ॥ दौल देहसौं नेह देहको,-हेतु कह्यौ ग्रंथनमें। तू काहेको० ॥ ४ ॥

१ कारागार जहलखाना। २ चमड़ेसे ढकी हुई। ३ मास। ४ आयुरूपी बेड़ियोंमें।

८५.

धन धन साधर्मीजन मिलनकी घरी, बरसत भ्रम-तापहरन ज्ञानघनझरी ॥ टेक ॥ जाके विन पाये भव-विपति अति भरी । निजपरहित अहितकी कछू न सुध परी ॥ धन० ॥ १ ॥ जाके परभाव चित्त सुथिरता करी । संशय भ्रम मोहकी सु वासना टरी ॥ धन० ॥ २ ॥ मिथ्यागुरुदेवसेव टेव परिहरी । वीतरागदेव सुगुरुसेव उरधरी ॥ धन० ॥ ३ ॥ चारों अनुयोग सुहित[1]देश दिठपरी । शिवमगके लाह[2]को सुचाह विस्तरी ॥ धन० ॥४॥ सम्यक् तरु धरनि येह करन[3]-करिहरी । भवजलको तरनि[4]समर[5]-भुजग-विपजरी ॥ धन० ॥ ५ ॥ पूरवभव या प्रसाद रमनि शिव वरी । सेवो अब दौल याहि बात यह खरी ॥ धन० ॥ ६ ॥

८६.

धनि मुनि जिनकी, लगी लौ[6] शिवओरनै[7] । धनि ॥ टेक ॥ सम्यग्दर्शनज्ञानचरन-निधि, धरत हरत भ्रम-चोरनै । धनि० ॥ १ ॥ यथाजात[8]मुद्राजुत सुंदर, सदन विजन[9] गिरिकोरनै । तृन कंचन अरि स्वजन गिनत

---

१ हितोपदेश । २ लाभकी । ३ इन्द्रियरूपी हाथियोंको सिंहके समान । ४ जहाज । ५ कामदेवरूपी सर्पके लिये विषनाशक जड़ी । ६ लगन । ७ 'नै' विभक्ति सब जगह 'को' के अर्थमें है । ८ नग्न दिगम्बर । ९ निर्जन ।

सम, निंदन और निहोरनै । धनि० ॥ २ ॥ भवसुख-चाह सकल तजि वल सजि, करत द्विविध तप घोरनै ॥ परमविरागभाव पैवितैं नित, चूरत करम कठोरनै ॥ धनि० ॥ ३ ॥ छीन शरीर न हीन चिदानन, मोहत मोहझकोरनै । जग-तप-हर भँवि-कुमुद-निशाकर मोदन दौल चकोरनै ॥ धनि० ॥ ४ ॥

८७.

धनि मुनि जिन यह, भाव पिछाना । धनि० ॥ टेक ॥ तनव्यय वांछित प्रापति मानी, पुण्यउदय दुख जाना । धनि० ॥ १ ॥ एकविहारि सकल ईश्वरता, त्याग महोत्सव माना । सब सुखको परिहार सार सुख, जानि रागरुष भाना ॥ धनि० ॥ २ ॥ चित्स्वभावको चिंत्य प्रान निज, विमल-ज्ञानदृगसाना । दौल कौन सुख जान लह्यो तिन, करो शांतिरसपाना ॥ धनि० ॥३॥

८८.

धनि मुनि निज आतमहित कीना । भव असार तन अशुचि विषय विष, जान महाव्रत लीना ॥ धनि मुनि जिन आतमहित० ॥ टेक ॥ एकाविहारी परिगह छारीपरिसह सहत अरीना । पूरव तन तपसाधन मान न, लाज गनी परवीना ॥ धनि मुनि० ॥ १ ॥

१ प्रार्थना करनेको । २ वज्रसे । ३ भव्यरूपी कुमोदनीको चन्द्रमा । ४ ऐश्वर्य । ५ सम्यग्ज्ञान, सम्यग्दर्शनसहित ।

शून्य सदन गिर गहन गुफामें, पद्मासन आसीना। परभावनतैं भिन्न आपपद, ध्यावत मोहविहीना॥ धनि मुनि०॥ २॥ स्वपरभेद जिनकी बुधि निजमें, पागी वाह्य लगीना। दौल तास पदवारिजरजने, किस अघ करे न छीना॥ धन मुनि०॥ ३॥

८९.

निपट अयाना, तैं आपा न जाना, नाहक भरम भुलाना वे। निपट०॥ टेक॥ पीय अनादि मोहमद मोह्यो, परपदमें निज माना वे। निपट०॥ १॥ चेतन चिह्न भिन्न जड़तासों, ज्ञानदरशरस-साना वे। तनमें छिप्यो लिप्यो न तदपि ज्यौं, जलमें कँजदल माना वे॥ निपट०॥२॥ सकलभाव निज निज परनतिमय, कोइ न होय बिराना वे। तू दुखिया परकृत्य मानि ज्यौं, नभताड़न-श्रम ठाना वे॥ निपट०॥ ३॥ अजँ-गनमें हँरि भूल अपनपो, भयो दीन हैराना वे। दौल सुगुरुधुनि सुनि निजमें निज, पाय लह्यो सुखथाना वे॥ निपट०॥ ४॥

९०.

निजहितकारज करना भाई! निजहित कारज करना॥ टेक॥ जनममरनदुख पावत जातैं, सो

१ चरणरूपी कमलोंकी धूलिने। २ किसके। ३ पाप। ४ कमलपत्र। ५ आकाशको पीटने जैसा। ६ बकरोंमें। ७ सिंह।

विधिबंध[1] कतरना । निज० ॥ १ ॥ ज्ञानदरस अरु राग फरस रस, निजपरचिह्न भ्रमरना । संधिभेद बुधिछैनीतैं[2] कर, निज गहि पर परिहरना ॥ निजहित० ॥२॥ परिग्रही[3] अपराधी शंकै, त्यागी अभय विचरना । त्यौं परचाह बंध दुखदायक, त्यागत सब सुख भरना ॥ निजहित० ॥ ३ ॥ जो भवभ्रमन न चाहे तो अब, सुगुरुसीख उर धरना । दौलत स्वरस सुधारस चाखो, ज्यौं विनसै भवमरना ॥ निजहित० ॥ ४ ॥

९१.

मनवचतन करि शुद्ध भजो जिन, दाँव[4] भला पाया। अवसर फेर मिलै नाहिं ऐसा, यौं सतगुरु गाया ॥ मनवच० ॥ टेक ॥ बस्यो अनादिनिगोद निकसि फिर, थावर देह धरी । काल असंख्य अकाज गमायो, नेकु न समुझि परी ॥ मनवच० ॥ १ ॥ चिंतामनि दुर्लभ लहिये ज्यौं, त्रसपरजाय लहीं । लट पिपील अलिआदि जन्ममें, लह्यो न ज्ञान कहीं ॥ मनवच० ॥ २ ॥ पंचेंद्रिय पशु भयो कष्टतैं, तहाँ न बोध लह्यो । स्वपरविवेकरहित विन संयम, निशदिन भार वह्यो ॥ मनवच० ॥ ३ ॥ चौपथ चलत रतन लहिये ज्यौं, मनुषदेह पाई । सुकुल जैनवृष सतसंगति यह, अतिदुर्लभ भाई ॥

---

१ कर्मबन्ध । २ बुद्धिरूपी छैनीसे निज और परका संधिभेद करना । ३ परिग्रहका धारी तथा परकी वस्तु ग्रहणकरनेवाला चोर । ४ मौका ।

मनवच० ॥ ४ ॥ यौं दुर्लभ नरदेह कुधी जे, विषयन-सँग खोवैं। ते नर मूढ अजान सुधारस, पाय पांव धोवैं ॥ मनवच० ॥ ५ ॥ दुर्लभ नरभव पाय सुधी जे, जैनधर्म सेवैं। दौलत ते अनंत अविनाशी, सुख शिवका वेवैं ॥ मनवचतन करि० ॥ ६ ॥

९२.

मोहिड़ा रे. जिय! हितकारी न सीख सम्हारै। भववनभ्रमत दुखी लखि याको, सुगुरु दयालु उचारै॥ मोहि० ॥ टेक ॥ विषय भुजंगम संग न छोड़त, जो अनंतभव मारै। ज्ञान विराग पियूष न पीवत, जो भवव्याधि विड़ारै॥ मोहि० ॥ १ ॥ जाके संग दुरैं अपने गुन, शिवपद अंतर पारै। ता तनको अपनाय आप चिन,-मूरतको न निहारै ॥ मोहि० ॥ २ ॥ सुत दारा धन काज साज अघ, आपन काज बिगारै। करत आपको अहित आपकर, ले कृपान जल दारै॥ मोहि० ॥ ३ ॥ सही निगोद नरककी वेदन, वे दिन नाहिं चितारै। दौल गई सो गई अब हू नर, धर दृग-चरन सम्हारै ॥ मोहिड़ा० ॥ ४ ॥

९३.

मेरे कब ह्वै वा दिनकी सुघरी। मेरे० ॥ टेक ॥ तन बिनवसन असनबिन बनमें, निवसों नासादृष्टि

---

१ मूर्ख। २ जानें अनुभव करें। ३ तलवार लेकर जलको काटता है।

धरी। मेरे० ॥ १ ॥ पुण्यपापपरसौं कब विरचों, परचों निजनिधि चिर-विसरी। तज उपाधि सजि सहजसमाधी, सहों [1]घाम-हिम-मेघझरी ॥ मेरे० ॥ २ ॥ कब थिरजोग धरों ऐसो मोहि, [2]उपल जान मृग खाज हरी। ध्यान-कमान तान [3]अनुभव-शर, छेदों किहि दिन मोह अरी ॥ मेरे० ॥ ३ ॥ कब तृनकंचन एक गनों अरु, [4]मनिजड़ितालय [5]शैलदरी। दौलत सतगुरुचरनसेव जो, पुरवो आश यहै हमरी ॥ मेरे० ॥ ४ ॥

९४.

लाल कैसे जावोगे, असरनसरन कृपाल। लाल० ॥ ॥ टेक ॥ इक दिन सरस वसंतसमयमें, केशवकी सब नारी। प्रभुप्रदच्छनारूप खड़ी है, कहत नेमिपर वारी। लाल० ॥ १ ॥ कुंकुम लै मुख मलत रुकमनी, रँग छिरकत गांधारी। सतभामा प्रभुओर जोर कर, छोरत है पिचकारी ॥ लाल० ॥ २ ॥ व्याह कबूल करो तौ छूटौ, इतनी अरज हमारी। ओंकार [6]कहकर प्रभु मुलके, छाँड़ दिये जगतारी ॥ लाल० ॥ ३ ॥ पुलकितवदन [7]मदनँपितु-भामिनि, निज निज सदन सिधारी।

---

१ धूप-शीत-वर्षा। २ पत्थर। ३ अनुभवरूपी वाण। ४ रत्नजड़ित महल। ५ पर्वतकी कंदरा। ६ स्वीकार। ७ मगनप्रति–ऐसा भी पाठ है। मदनपितु-भामिनि–मदन अर्थात् प्रद्युम्न कामदेवके पिता श्रीकृष्णकी स्त्रियें।

दौलत जादववंशव्योमशशि[1], जयो जगतहितकारी ॥ लाल० ॥ ४ ॥

९५.

शिवपुरकी डगर[2] समरससौं भरी; सो विषयविरस-रचि चिरविसरी । शिव० ॥ टेक ॥ सम्यकदरश-बोध-व्रतमय भव,—दुखदावानल-मेघझरी । शिवपुर० ॥ १ ॥ ताहि न पाय तपाय देह बहु, जनममरन करि विपति भरी । काल पाय जिनधुनि सुनि मैं जन, ताहि लहूं सोइ धन्य घरी ॥ शिव० ॥ २ ॥ ते जन धनि या माहिं चरत नित, तिन कीरति सुरपति उचरी । विषयचाह भवराह त्याग अब, दौल हरो रजरहसिअरी[3] ॥ शिवपुर० ॥ ३ ॥

९६.

तोहि समझायो सौ सौ बार, जिया तोहि समझायो० ॥ टेक ॥ देख सुगुरुकी परहितमें रति, हितउपदेश सुनायो । सौ सौ बार० ॥ १ ॥ विषयभुजंग सेय सुख पायो, पुनि तिनसौं लपटायो । स्वपदविसार रच्यौ परपदमें, मदरत ज्यौं बोरायो । सौ सौ बार० ॥ २ ॥ तन धन स्वजन नहीं हैं तेरे; नाहक नेह लगायो । क्यौं

---

१ 'जादववंशव्योमशशि' ऐसा भी पाठ है । जदुवंशरूपी आकाशके चन्द्रमा नेमिनाथ भगवान् । २ मार्ग । ३ चारघातिया कर्म । ४ शराबी—मद्यप ।

न तजै भ्रम चाख समामृत, जो नित संतसुहायो ॥ सौ सौ वार० ॥ ३ ॥ अव हू समझ कठिन यह नरभव, जिंन वृष विना गमायो । ते विलखैं मनि डार उदधि-में, दौलत को पछतायो ॥ सौ सौ० ॥ ४ ॥

९७.

न मानत यह जिय निपट अनारी । सिख देत सुगुरु हितकारी ॥ न मानत० ॥ टेक ॥ कुमतिकुनारि संग रति मानत, सुमतिसुनारि विसारी । न मानत० ॥ १ ॥ नरपरजाय सुरेश चहैं सो, चखि विषविषय विगारी । त्याग अनाकुल ज्ञान चाह पर,-आकुलता विसतारी ॥ न मानत० ॥ २ ॥ अपनी भूल आप समतानिधि, भवदुख भरत भिखारी । परद्रव्यनकी परनतिको शठ, वृथा वनत करतारी ॥ न मानत० ॥ ३ ॥ जिस कषाय-दव जरत तहां अभि,-लाषछटा घृत डारी । दुखसौं डरै करै दुखकारन,-तैं नित प्रीति करारी ॥ न मानत० ॥ ४ ॥ अतिदुर्लभ जिनवैन श्रवनकरि, संशयमोह निवारी । दौल स्वपर-हित-अहित जानके, होवहु शिवमगचारी ॥ न मानत० ॥ ५ ॥

९८

हम तो कवहूं न हित उपजाये । सुकुल-सुदेव-सुगु-

१ समता रूपी अमृत । २ जिन्होने । ३ धर्म । ४ पुद्गलसम्बन्धी । ५ कर्ता । ६ गाढ़ी ।

रु-सुसंगहित, कारन पाय गमाये। हम तो० ॥ टेक ॥ ज्यौं शिशु नाचत, आप न मांचत, लखनहार बौराये। त्यौं श्रुत वांचत आप न राचत, औरनको समुझाये ॥ हम तो० ॥ १ ॥ सुजस-लाहकी चाह न तज निज, प्रभुता लखि हरखाये। विषय तजे न रंजे निजपदमें, परपद अपद लुभाये ॥ हम तो० ॥ २ ॥ पापत्याग जिन-जाप न कीन्हौं, सुमनचाप-तप-ताये। चेतन तनको कहत भिन्न पर, देह सनेही थाये। हम तो० ॥ ३ ॥ यह चिर भूल भई हमरी अब, कहा होत पछताये। दौल अजौं भवभोग रचौ मत, यौं गुरु वचन सुनाये ॥ हम तो० ॥ ४ ॥

९९.

हम तो कबहूं न निजगुन भाये। तन निज मान जान तनदुखसुख,-में विलखे हरखाये। हम तो० ॥ टेक ॥ तनको गरन मरन लखि तनको, धरन मान हम जाये। या भ्रम भौंर परे भवजल चिर, चहुंगति विपत लहाये ॥ हम तो० ॥ १ ॥ दरशबोधव्रतसुधा न चाख्यौ, विविध विषय-विष खाये। सुगुरु दयाल सीख दइ पुनि पुनि, सुनि सुनि उर नाहिं लाये ॥ हम

---

१ मन होते। २ शास्त्र पढ़ते। ३ सुयशके लाभकी। ४ रचे-मन हुए। ५ जिनदेवका जपन। ६ सुमनचाप अर्थात् कामदेवकी तपनमें तप्त। ७ भावना की। ८ उत्पन्न हुए।

तो० ॥ २ ॥ वहिरातमता तजी न अन्तर,-दृष्टि न ह्वै निज ध्याये । धाम-काम-धन-रामाकी नित, आश-हुताश-जलाये ॥ हम तो० ॥ ३ ॥ अचल अनूप शुद्ध चिद्रूपी, सब सुखमय मुनि गाये । दौल चिदानँद स्वगुन मगन जे, ते जिय सुखिया थाये ॥ हम तो० ॥४॥

१००.

हम तो कबहूं न निज घर आये । परघर फिरत बहुत दिन बीते, नाम अनेक धराये ॥ हम तो० ॥ टेक ॥ परपद निजपद मानि मगन ह्वै, परपरनति लपटाये । शुद्ध बुद्ध सुखकंद मनोहर, चेतनभाव न भाये ॥ हम तो० ॥ १ ॥ नर पशु देव नरक निज जान्यौ, परजय-बुद्धि लहाये । अमल अखंड अतुल अविनाशी, आतमगुन नहिं गाये ॥ हम तो० ॥ २ ॥ यह बहु भूल भई हमरी फिर, कहा काज पछताये । दौल तजौ अजहूँ विषयनको, सतगुरु वचन सुनाये ॥ हम तो० ॥ ३ ॥

१०१.

मानत क्यौं नहिं रे, हे नर सीख सयानी । भयौ अचेत मोह-मद पीके, अपनी सुधि विसरानी ॥ टेक ॥ दुखी अनादि कुबोध[2] अव्रततैं[3], फिर तिनसौं रति ठानी ।

---

१ आशारूपी अग्निमें । २ मिथ्यात्वसे । ३ मिथ्याचारित्रसे ।

ज्ञानसुधा निजभाव न चाख्यौ, परपरनति मति सानी ॥ मानत० ॥ १ ॥ भव असारता लखै न क्यौं जहँ, नृप ह्वै कृमि विटै-थानी । सधन निधन नृप दास स्वजन रिपु, दुखिया हरिसे प्रानी ॥ मानत० ॥ २ ॥ देह एह गँद-गेह नेह इस, है बहु विपति-निशानी । जड़ मलीन छिनछीन करमकृत,-बंधन शिवसुखहानी ॥ मानत० ॥ ३ ॥ चाहज्वलन ईंधन-विधि-वन-घन, आकुलता कुलखानी । ज्ञान-सुधा-सर-शोषनरवि ये, विषय अमित मृतुदानी ॥ मानत० ॥ ४ ॥ यौं लखि भव-तन-भोग-विरचिकरि, निजहित सुन जिनवानी । तज रुपराग दौल अब अवसर, यह जिनचंद्र बखानी ॥ मानत० ॥ ५ ॥

१०२.

/ जानत क्यौं नहिं रे, हे नर आतमज्ञानी । जानत० ॥ टेक ॥ रागदोष पुद्गलकी संपति, निहचै शुद्धनिशानी । जानत० ॥ १ ॥ जाय नरकपशुनरसुरगतिमें, यह परजाय विरानी । सिद्धस्वरूप सदा अविनाशी, मानत विरले प्रानी ॥ जानत० ॥ २ ॥ कियौ न काहू हरै न कोई, गुरु-शिख कौन कहानी । जनममरनमलरहित

---

१ कीट । २ विष्ठाके स्थानमें । ३ इन्धनसमूह, लकड़ियें । ४ रोगका घर । ५ मृत्यु ।

विमल है, कीचविना जिमि पानी ॥ जानत० ॥ ३ ॥ सार पदारथ है तिहुँजगमें, नाहिं क्रोधी नहिं मानी । दौलत सो घटमाहिं विराजै, लखि हूजे शिवथानी ॥ जानत० ॥ ४ ॥

१०३.

हे हितवांछक प्रानी रे, कर यह रीति सयानी । हे हित० ॥ टेक ॥ श्रीजिनचरन चितार धार गुन, परम विराग विज्ञानी । हे हित० ॥ १ ॥ हरन भयामय[1] स्वपरदयामय, सरधौ[2] वृष[3] सुखदानी । दुविध उपाधि वाध शिवसाधक, सुगुरु भजौ गुणथानी ॥ हे० ॥ २ ॥ मोह-तिमिर-हर मिहिर भजो श्रुत, स्यात्पद जास निशानी । सप्ततत्त्व नव अर्थ विचारहु, जो वरनै जिनवानी ॥ हे हित० ॥ ३ ॥ निजपर भिन्न पिछान मान पुनि, होहु आप सरधानी । जो इनको विशेष जानन सो, ज्ञायकता मुनि मानी ॥ हे हित० ॥ ४० ॥ फिर व्रत समिति गुपति सजि, अरु तजि प्रवृति शुभास्रवदानी । शुद्ध स्वरूपाचरन लीन ह्वै, दौल वरौ शिवरानी ॥ हे हित० ॥ ५ ॥

१०४.

हे नर, भ्रमनींद क्यौं न, छाँड़त दुखदाई । सोवत

१ डर और रोग । २ श्रद्धान करो । ३ धर्म । ४ सूर्य ।

चिरकाल सोंज, आपनी ठगाई । हे नर० ॥ टेक ॥ मूरख अघ कर्म कहा, भेदै नाहिं मर्म लहा, लागै दुख-ज्वालकी न, देहकै तताई ॥ हे नर० ॥ १ ॥ जमके रव वाजते, सुभैरव अति गाजते, अनेक प्रान त्यागते, सुनै कहा न भाई ॥ हे नर० ॥ २ ॥ परको अपनाय आप, रूपको भुलाय हाय, करनविषय दारु जार, चाहदौं वढ़ाई ॥ हे नर० ॥ ३ ॥ अव सुन जिनवान, राग द्वेषकौं जघान, मोक्षरूप निज पिछान दौल, भज विरागताई ॥ हे नर० ॥ ४ ॥

१०५.

प्रभु थारी आज महिमा जानी, प्रभु थारी० ॥ टेक ॥ अवलौं मोह महामद पिय मैं, तुमरी सुधि विसरानी । भाग जगे तुम शांति छवी लखि, जड़ता नींद विलानी ॥ प्रभु० ॥ १ ॥ जगविजयी दुखदाय रागरुप, तुम तिनकी थिति भानी । शान्तिसुधासागर गुन आगर, परमविराग विज्ञानी । प्रभु० ॥ २ ॥ समवसरन अतिशय कमलाजुत, पै निर्ग्रन्थ निदानी । क्रोधविना दुठ मोह-विदारक, त्रिभुवनपूज्य अमानी । प्रभु० ॥ ३ ॥ एक-स्वरूप सकलज्ञेयाकृत, जग-उदास जग-ज्ञानी । शत्रुमित्र सवमें तुम सम हो, जो दुखसुख फल थानी । प्रभु० ॥ ४ ॥

---

१ 'मुद्दर अघ करम खान, भेदै नहिं मरमयान ' ऐसा भी पाठ है ।

परम ब्रह्मचारी है प्यारी, तुम हेरी शिवरानी। है कृत-कृत्य तदपि तुम शिवमग, उपदेशक अगवानी ॥ ५ ॥ भई कृपा तुमरी तुममैंतैं, भक्ति सु मुक्तिनिशानी। है दयाल अब देहु दौलको, जो तुमने कृति ठानी ॥ ६ ॥

१०६.

तुम सुनियो श्रीजिननाथ, अरज इक मेरी जी। तुम० ॥ टेक ॥ तुम विन हेत जगत उपकारी, वसु कर्मन मोहि कियो दुखारी, ज्ञानादिक निधि हरी हमारी, द्यावौ सो मम फेरी जी ॥ तुम सुनि० ॥१॥ मैं निज भूलि तिनहि सँग लाग्यौ, तिन कृत करन-विषय-रस पाग्यौ, तातैं जन्म-जरा-दव-दाग्यौ, कर समता सम नेरी (?) जी ॥ तुम सु० ॥२॥ वे अनेक प्रभु मैं जु अकेला, चहुँगति विपतिमाहिं मोहि पेला, भाग जगे तुमसौं भयो भेला, तुम हो न्यावनिवेरी जी ॥ तुम सु० ॥ ३ ॥ तुम दयाल बेहाल हमारो, जगतपाल निज विरद समारो, ढील न कीजे वेग निवारो, दौलतनी भवफेरी जी ॥ तुम सु० ॥ ४ ॥

१०७.

अरे जिया, जग धोखेकी टाटी। अरे० ॥ टेक ॥ झूठा उद्यम लोक करत हैं, जिसमें निशदिन घाटी। अरे० ॥ १ ॥ जान बूझके अन्ध बने हैं, आंखन बांधी पाटी। अरे० ॥ २ ॥ निकल जांयगे प्राण छिनकमें,

पड़ी रहैगी माटी। अरे० ॥ ३ ॥ दौलतराम समझ मन अपने, दिलकी खोल कपाटी। अरे० ॥ ४ ॥

१०८.

जय[1] वीर जिनवीर जिनवीर जिनचंद, कलुषनिकंद मुनिहृदसुखकंद। जय वीर० ॥ टेक ॥ सिद्धारथनंद त्रिभुवनको दिनेन्दचन्द, जा वचकिरन भ्रम तिमिरनिकंद। जय वीर ॥ १ ॥ जाके पदअरविन्द सेवत सुरेंद्रवृंद, जाके गुन रटत फटत भवफंद। जय वीर० ॥२॥ जाकी शान्तिमुद्रा निरखत हरखत रिखि, जाके अनुभवत लहत चिदानन्द। जय वीर० ॥ ३ ॥ जाके घातिकर्म विघटत प्रघटत भये, अनन्त दरस बोध-वीरज अनन्द। जय वीर० ॥ ४ ॥ लोकालोकज्ञाता पै स्वभावरत राता प्रभु, जगको कुशलदाता त्राता पै अद्वंद। जय वीर० ॥ ५ ॥ जाकी महिमा अपार गणी न सके उचार, दौलत नमत सुख चहत अमंद ॥ जय वीर० ॥ ६ ॥

जकड़ी १०९.

अब मन मेरा वे, सीखवचन सुन मेरा। भजि जिनवरपद वे, जो विनशै दुख तेरा ॥ विनशै दुख तेरा भव[2]वनकेरा, मनवचतन जिनचरन भजौ। पंच[3]करन

१ इस भजनके प्रत्येक चरणके अन्तमें "है" लगानेसे इकतीसा कवित्त बन जाता है। २ संसाररूपी वनका। ३ पांच इन्द्रिया।

वश राख सुज्ञानी, मिथ्यामतमग दौर तजौ ॥ मिथ्यामतमगपगि अनादितैं, तैं चहुंगति कीन्हा फेरा। अब हू चेत अचेत होय मत, सीखवचन सुनि मन मेरा ॥१॥ इस भववनमें वे, तैं साता नाहिं पाई। वसुविधिवश ह्वै[1] वे, तैं निज सुधि विसराई ॥ तैं निज सुधि विसराई भाई, तातैं विमल न बोध लहा। परपरनतिमें मगन भयौ तू, जन्मजरा-मृत-दाह दहा ॥ जिनमत सारसरोवरकूं अब,—गाहि लागि निजचिंतनमें। तौ दुखदाह नशै सब नातर, फेर बसै इस भववनमें ॥२॥ इस तनमें तू वे, क्या गुन देख लुभाया। महा अपावन वे, सतगुरु याहि बताया ॥ सतगुरु याहि अपावन गाया, मलमूत्रादिकका गेहा। कृमिकुल-कलित लखत घिन आवै, यासौं क्या कीजे नेहा? ॥ यह तन पाय लगाय आपनी, परनति शिवमग-साधनमें। तो दुखदंद नशै सब तेरा, यही सार है इस तनमें ॥३॥ भोग भले न सही, रोगशोकके दानी। शुभगति रोकन वे, दुर्गतिपथअगवानी ॥ दुर्गतिपथअगवानी हैं जे, जिनकी लगन लगी इनसौं। तिन नानाविधि विपति सही है, विमुख भया निजसुख तिनसौं ॥ कुंजर[2] झख[3] अलि[4] शलभ[5] हिरन इन, एकअक्षवश[6] मृत्यु

---

१ आठ कर्मोंके वश होकर। २ हाथी। ३ मछली। ४ भौंरा—भ्रमर। ५ पतग। ६ एक एक इंद्रियके वशसे।

लही । यातैं देख समझ मनमाहीं, भवमें भोग भले न सही ॥ ४ ॥ काज सरै तब वे, जब निजपद आराधै । नशै भवावलि[1] वे, निराबाध पद लाधै ॥ निराबाध पद लाधै तब तोहि, केवल दर्शन ज्ञान जहाँ । सुख अनन्त अतिइन्द्रियमंडित, वीरज अचल अनंत तहाँ ॥ २ ॥ ऐसा पद चाहै तौ भज निज[2], वारवार अब को उचरै । दौल मुख्य[3] उपचार[4] रत्नत्रय, जो सेवै तो काज सरै ॥५॥

जकड़ी ११०.

वृषभादि जिनेश्वर ध्याऊं, शारद अंबा चित लाऊं । द्वैविध-परिग्रह-परिहारी, गुरु नमहुं स्वपरहितकारी ॥ हितकार तारक देव श्रुत गुरु, परख निज उर लाइये । दुखदाय कुपथविहाय शिवसुख,—दाय जिनवृष ध्याइये ॥ चिरतैं कुमग पगि मोहठगकरि, ठग्यौ भव[5]-कानन पर्यौ । ब्यालीसद्विक[6] लख जौनिमें, जर[7]मरनजामन-दव जर्यौ ॥ १ ॥ जब मोहरिपु दीन्हीं घुमरिया, तसुवश निगोदमें परिया । तहाँ स्वास एकके माहीं, अष्टादश मरन लहाहीं ॥ लहि मरन अन्तमुहूर्तमें, छ्यासठसहस शततीन ही । पटतीस काल अनंत यौं दुख, सहे उपमा ही नही ॥ कबहूं लही वर आयु छिति[8]-जल, पवन-पावक-

१ भवोंका समूह । २ "जिन" भी पाठ है । ३ निश्चयरत्नत्रय । ४ व्यवहाररत्नत्रय । ५ संसाररूपी वन । ६ चौरासीलाख योनि । ७ वृद्धावस्था, मृत्यु, और जन्मरूपी अग्निमें जला । ८ पृथ्वी ।

तरुतणी । तसु भेद किंचित् कहूं सो सुन, कह्यौ जो गौतमगणी ॥ २ ॥ पृथिवी द्वय भेद वखाना, मृदु माटी कठिन पखाना। मृदु द्वादशसहस वरसकी, पाहन वाईस सहसकी ॥ पुनि सहस सात कही उदक त्रय, सहसवर्ष समीरकी । दिन तीन पावक दशसहस तरु, प्रमित नाश सुपीरकी ॥ विनघात सूच्छम देहधारी, घातजुत गुरुतन लह्यौ। तहँ खनन तापन जलन व्यंजन, छेद भेदन दुख सह्यौ ॥ ३ ॥ शंखादि दुइंद्री प्रानी, थिति द्वादशवर्ष वखानी । यूकादि तिइंद्री हैं जे, वासर उनचास जियें ते ॥ जीवैं छमास अलीप्रमुख, व्याली-ससहस उरगतनी। खगकी वहत्तरसहस नवपूर्वांग सरी-सृपकी भनी ॥ नर मत्स्य पूरवकोटकी थिति, करमभूमि वखानिये । जलचर विकल विन भोगभूनर, पशु त्रिपल्य प्रमानिये ॥ ४ ॥ अघवशकर नरकवसेरा, भुगतै तहँ कष्ट घनेरा । छेदै तिलतिल तन सारा, छेपै द्रहपूतिमँझारा ॥ मंझार वज्रानिल पचावैं, धरहिं शूली ऊपरैं । सींचैं जु खारे वारिसौं दुठ, कहैं व्रण नीके करैं ॥ वैतरणिसरिता समल जल अति, दुखद तरु सैंवलतनें । अति भीम वन असिक्रांतसम दल, लगत दुख दैवैं घनें ॥ ५ ॥ तिस भूमें हिम गरमाई, सुरगि-

---

१ पानी । २ जूंआदि । ३ भ्रमरआदि । ४ सर्पविशेष । ५ भोगभूमिया मनुष्य और पशु । ६ दुर्गंधिके भरे तालाव । ७ फौंडे । ८ तलवारकी धार ।

रिसम अंस[1] गल जांई। तामें थिति सिंधुतनी है, यौं दुखद नरक अवनी[2] है॥ अवनी तहाँकीतैं निकसि, कबहूं जनम पायौ नरो। सर्वांग सकुचित अति अपावन, जठर जननीके परो॥ तहँ अधोमुख जननी रसांश,—थकी जियौ नवमास लों। ता पीरमें कोउ सीर नाहीं, सहै आप निकास लों॥ ६॥ जनमत जो संकट पायौ, रसनातैं जात न गायौ। लहि बालपनैं दुख भारी, तरुनापो लयौ दुखकारी॥ दुखकारि इष्ट-वियोग अशुभ, सँयोग सोग सरोगता। पँरसेव[3] ग्रीपम सीत पावस, सहै दुख अति भोगता। काहू कुँतिय[4] काहू कुबांधव, कहुँ सुता व्यभिचारिणी। किसहू विंसन-रत[5] पुत्र दुष्ट,—कलत्र कोऊ परऋणी॥ ७॥ वृद्धापनके दुख जेते, लखिये सब नयननतैं ते। मुख लाल[6] वहै तन हालै, विन शक्ति न वसन सँभालै॥ न सँभाल जाके देहकी तौं, कहो वृँपकी[7] का कथा? तब ही अचानक आन जम गह, मनुजजन्म गयौ वृथा॥ काहू जनम शुभठान किंचित, लह्यौ पद चंहुंदेवको[8]। अभियोगं[9] किल्विंष[10] नाम पायौ, सयौ दुख परसेवको

---

१ लोहा। २ पृथिवी। ३ दूसरोंकी सेवा, नोकरी। ४ दुष्टस्त्री। ५ व्यसनी। ६ लाला लार। ७ धर्मकी। ८ चार प्रकारके देव। ९–१० आभियोग और किल्विष, देवोंमें एक प्रकारके नीचे सेवकोंके समान देव होते हैं।

॥ ८ ॥ तहँ देख महत सुरऋद्धी, झूर्यौ विषयनकरि गृद्धी । कवहूं परिवार नसानो, शोकाकुल ह्वै विललानो ॥ विललाय अति जव मरन निकट्यौ, सह्यौ संकट मानसी । सुरविभव दुखद लगी जवै तव, लखी माल मलान सी ॥ तव ही जु सुर उपदेशहित समु,-झायियो समुझ्यौ न त्यौं । मिथ्यात्वजुत च्युत कुगति पाई, लहै फिर सो स्वपद क्यौं ? ॥ ९ ॥ यौं चिरभव अटवी गाही, किंचित साता न लहाही । जिनकथित धरम नहिं जान्यौ, परमाहिं अपनपो मान्यौ ॥ मान्यौ न सम्यक त्रयातम, आतम अनातममें फँस्यौ । मिथ्याचरन दृग्ज्ञान रंज्यौ, जाय नवग्रीवक वस्यौ ॥ पै लह्यौ नहिं जिनकथित शिवमग, वृथा भ्रम भूल्यौ जिया । चिदभावके दरसावविन सव, गये अहले तप किया ॥ १० ॥ अव अदभुत पुण्य उपायौ, कुल जात विमल तू पायौ । यातैं सुन सीख सयाने, विषयनसौं रति मत ठानै ॥ ठानै कहा रति विषयमें ये, विषम विषधरसम लखो । यह देह मरत अनंत इनको, त्याग आतमरस चखो ॥ या रसरसिकजन वसे शिव अव, वसें पुनि वसि हैं सही । दौलत स्वरचि परविरचि सतगुरु,-शीख नित उर धर यही ॥ ११ ॥

---

१ माला । २ मुरझानी हुई । ३ व्यर्थ । ४ सर्प ।

होली १११.

ज्ञानी ऐसी होली मचाई० ॥ टेक ॥ राग कियौ विपरीत विपन घर, कुमति कुसौति सुहाई । धार दिगंवर कीन्ह सु संवर, निज-परभेद लखाई । घात विषयनिकी बचाई ॥ ज्ञानी ऐसी० ॥ १ ॥ कुमति सखा भजि ध्यानभेद सम, तनमें तान उड़ाई । कुंभक ताल मृदँगसौं पूरक, रेचक बीन बजाई । लगन अनु-भवसौं लगाई ॥ ज्ञानी ऐसी० ॥ २ ॥ कर्मवलीता रूप नाम अरि, वेद सुइन्द्रि गनाई । दे तप अग्नि भस्म करि तिनको, धूल अघाति उड़ाई । करी शिव तियकी मिलाई ॥ ज्ञानी ऐसी० ॥ ३ ॥ ज्ञानको फाग भागवश आवै, लाख करौ चतुराई । सो गुरु दीनदयाल कृपा-करि, दौलत तोहि वताई । नहीं चितसे विसराई ॥ ज्ञानी ऐसी होली मचाई ॥ ४ ॥

११२.

मेरो मन ऐसी खेलत होरी ॥ टेक ॥ मन मिरदंग साजकरि त्यारी, तनको तमूरा वनोरी । सुमति सुरंग सरंगी बजाई, ताल दोउ कर जोरी । राग पांचौं पद कोरी ॥ मेरो मन ॥ १ ॥ समकृति रूप नीर भर झारी, करुना केशर घोरी । ज्ञानमई लेकर पिचकारी, दोउ करमाहिं सम्होरी । इन्द्रि पांचौं सखि वोरी ॥

मेरो मन० ॥ २ ॥ चतुर दानको है गुलाल सो, भरि भरि मूठि चलोरी। तपमें वांकी (?) भरि निज झोरी, यशको अवीर उड़ोरी। रंग जिनधाम मचोरी ॥ मेरो मन० ॥ ३ ॥ दौल वाल खेलें अस होरी, भवभव दुःख टलोरी। शरना ले इक श्रीजिनको री, जगमें लाज हो तोरी। मिलै फगुआ शिवगोरी। मेरो मन०॥४॥

११३.

निरखत जिनचंद री माई ॥ टेक ॥ प्रभुद्युति देख मंद भयौ निशिपति, आन सु पग लिपटाई । प्रभु सुचंद वह मंद होत है, जिन लखि सूर छिपाई । सीत अदभुत सो वताई ॥ निरखत जिन० ॥ १ ॥ अंवर शुभ्र निजंतर दीसै, तत्त्वमित्र सरसाई । फैलि रही जग धर्म जुन्हाई, चोरन चार लखाई । गिरा अमृत जो गनाई ॥ निरखत जिन० ॥ २ ॥ भये प्रफुल्लित भव्य कुसुदमन, मिथ्यातम सो नसाई । दूर भये भवताप सबनिके, वुध अंवुध सो वढ़ाई। मदन चकवेकी जुदाई॥ निरखत जिन० ॥ ३ ॥ श्रीजिनचंद वंद अव दौलत, चितकर चंद लगाई। कर्मवंध निर्वंध होत हैं, नाग-सुदमनि लसाई । होत निर्विष सरपाई ॥ निरखत जिन० ॥ ४ ॥

११४.

जिया तुम चालो अपने देश, शिवपुर थारो शुभथान। जिया० ॥ टेक ॥ लख चौरासीमें वहु भटके, लह्यौ न सुखरो लेश ॥ जिया० ॥ १ ॥ मिथ्यारूप धरे वहुतेरे, भटके वहुत विदेश ॥ जिया० ॥ २ ॥ विषयादिक वहुते दुख पाये, भुगते वहुत कलेश ॥ जिया० ॥ ३ ॥ भयो तिरजंच नारकी नरसुर, करि करि नाना भेष ॥ जिया० ॥ ४ ॥ दौलतराम तोड़ जगनाता, सुनो सुगुरुउपदेश ॥ जिया० ॥ ५ ॥

११५.

जय जय जग-भरम-तिमर,-हरन जिन धुनी ॥ टेक ॥ या विन समुझे अजौं न, सौंज निज सुनी। यह लखि हम निजपर अवि,-वेकता लुनी ॥ जय जय० ॥ १ ॥ जाको गनराज अंग, पूर्वमय चुनी। सोई कही है कुंद-कुंद, प्रमुख वहुमुनी ॥ जय जय० ॥ २ ॥ जे चर जड़ भये पीय, मोह वारुनी। तत्त्व पाय चेते जिन, थिर सुचित सुनी ॥ जय० जय० ॥ ३ ॥ कर्ममल पखारनेहि, विमल सुरधुनी। तज विलंव अंव करो, दौल उर पुनी ॥ जय जय० ॥ ४ ॥

११६.

अव मोहि जानि परी, भवोदधि तारनको है जैन ॥

टेक ॥ मोहतिमरतैं सदा कालके, छाय रहे मेरे नैन । ताके नाशन हेत लियो मैं, अंजन जैन सु एन ॥ अब० ॥ १ ॥ मिथ्यामती भेषको लेकर, भाषत हैं जो वैन । सो वे वैन असार लखेमैं, ज्यौं पानीके फैन ॥ अब मो० ॥ २ ॥ मिथ्यामती बेल जग फैली, सो दुख फलकी दैन । सतगुरु भक्तिकुठार हाथ लै, छेद लियौ अति चैन ॥ अब० ॥ ४ ॥ जा विन जीव सदैव कालतैं, विधि वश सुखन लहै न । अशरनशरन अभय दौलत अब, भजो रैन दिन जैन ॥ अब० ॥ ४ ॥

११७.

सुन जिन वैन, श्रवन सुख पायौ ॥ टेक ॥ नस्यौ तत्त्व दुर अभिनिवेशतम, स्याद उजास कहायौ । चिर विसर्यौ लह्यौ आतम रैन (?) ॥ श्रवन० ॥ १ ॥ दह्यौ अनादि असंजम दवतैं, लहि व्रत सुधा सिरायौ । धीर धरी मन जीतन मैन (?), श्रवन सुख० ॥ २ ॥ भरो विभाव अभाव सकल अवं, सकलरूप चित लायौ । दास लह्यौ अब अविचल चैन, श्रवन सुख० ॥ ३ ॥

११८.

वामा घर बजत बधाई, चलि देखि री माई ॥ टेक ॥ सुगुनरास जग-आस-भरन तिन, जने पार्श्व जिनराई । श्री ह्री धृति कीरति बुधि लछमी, हर्षंत अंग न माई ॥ चलि० ॥ १ ॥ वरन वरन मनि चूर सची सब, पूरत

चौक सुहाई। हाहा हूहू नारद तुंबर. गावत श्रुति सुखदाई ॥ चलि० ॥२॥ तांडव नृत्य नटत हरिनट तिन, नख नख सुरीं नचाई। किन्नर कर धर वीन वजावत, दृगमनहर छवि छाई ॥ चलि० ॥ ३ ॥ दौल तासु प्रभुकी महिमा सुर,-गुरुपै कहिय न जाई। जाके जन्म समय नरकनमें, नारकि साता पाई ॥ चलि० ॥ ४ ॥

११९.

जय श्री ऋषभ जिनेन्द्रा। नाश तौ करौ स्वामी मेरे दुखदंदा ॥ मातु मरुदेवी प्यारे, पिता नाभिके दुलारे, वंश तौ इक्ष्वाक जैसे नभवीच चंदा ॥ जय श्री० ॥१॥ कनक वरन तन, मोहत भविक जन, रवि शशि कोटि लाजैं, लाजै मकरन्दा ॥ जय श्री० ॥ २ ॥ दोष तौ अठारा नासे, गुन छियालीस भासे, अष्टकर्म काट स्वामी, भये निरफंदा ॥ जय श्री० ॥ ३ ॥ चार ज्ञानधारी गनी, पार नाहिं पावैं मुनी, दौलत नमत सुख चाहत अमंदा ॥ जय श्री० ॥ ४ ॥

१२०.

मत कीज्यौ जी यारी, ये भोग भुजग सम जानके, मत कीज्यौ० ॥ टेक ॥ भुजग डसत इकवार नसत है, ये अनंत मृतुकारी। तिसना तृषा बढ़ै इन सेयें, ज्यौं

---

१ सर्प। २ नृत्यके करनेवाले।

पीये जल खारी ॥ मत कीज्यौ जी० ॥ १ ॥ रोग वियोग शोक वनको घन[1], समता-लताकुठारी[2]। केहरि[3] करी[4] अरी[5] न देत ज्यौं, त्यौं ये दें दुख भारी ॥ मत कीज्यौ० ॥ २ ॥ इनमें रचे देव तरु थाये, पाये श्वभ्र[6] मुरारी[7]। जे विरचे[8] ते सुरपति अरचे, परचे सुख अधिकारी ॥ मत कीज्यौ० ॥ ३ ॥ पराधीन छिनमाहिं छीन है, पापबंधकरतारी ॥ इन्हैं गिनैं सुख आकमाहिं तिन, आमतनी बुधि धारी ॥ मत कीज्यौ० ॥ ४ ॥ मीन मतंग[9] पतंग अंग[10] मृग, इनवश भये दुखारी ॥ सेवत ज्यौं किंपाक[11] ललित, परिपाक समय दुखकारी ॥ मत कीज्यौ जी० ॥ ५ ॥ सुरपति नरपति खगपति-हूकी, भोग न आस निवारी, दौल त्याग अब भज विराग सुख, ज्यौं पावै शिवनारी ॥ मत कीज्यौ जी० ॥ ६ ॥

१२१.

सुधि लीज्यौ जी म्हारी, मोहि भवदुखदुखिया जानके, सुधि० ॥ टेक ॥ तीनलोकस्वामी नामी तुम, त्रिभुवनके दुखहारी। गनधरादि तुव शरन लई लख, लीनी सरन तिहारी ॥ सुध ली० ॥ १ ॥ जो विधि

---

१ मेघ। २ समतारूपी बेलके काटनेके लिये कुल्हाडी। ३ सिंह। ४ हाथी। ५ दुश्मन। ६ नरक। ७ नारायण। ८ वैरागी हुए। ९ हाथी। १० भ्रमर। ११ इन्द्रायणका फल।

अरी करी हमरी गति, सो तुम जानत सारी । याद किये दुख होत हिये ज्यौं, लागत कोट कटारी ॥ सुध लीज्यौ० ॥ २ ॥ लब्धिअपर्यापतनिगोदमें एक उसासमँझारी । जनममरन नवदुगुन विथाकी, कथा न जात उचारी ॥ सुध लीज्यौ० ॥ ३ ॥ भू जल ज्वलन पवन प्रतेक तरु, विकलत्रयतनधारी । पंचेंद्री पशु नारक नर सुर, विपति भरी भयकारी ॥ सुध लीज्यौ० ॥ ४ ॥ मोह महारिपु नेक न सुखमय, होन दई सुधि थारी । सो दुठ मंद भयौ भागनतैं, पाये तुम जगतारी ॥ ॥ सुध लीज्यौ० ॥ ५ ॥ यदपि विरागि तदपि तुम शिवमग, सहज प्रगटकरतारी । ज्यौं रविकिरन सहजमगदर्शक, यह निमित्त अनिवारी । सुध ली० ॥ ६ ॥ नाग छाग गज वाघ भील दुठ, तारे अधम उधारी । सीस नवाय पुकारत अवके, दौल अधमकी वारी ॥ सुध ली० ॥ ७ ॥

१२२.

मत राचो धीधारी, भव रंभथंभसम जानके । मत राचो ॥ टेक ॥ इंद्रजालको ख्याल मोह ठग, विभ्रमपास पसारी । चहुँगति विपतिमयी जामें जन, भ्रमत

---

१ अठारहवारकी । २ पृथ्वीकाय । ३ अग्निकाय । ४ हे बुद्धिमानो । ५ केलेके खमे समान ।

भरत दुख भारी ॥ मत० ॥१॥ रामा मा, मा वामा[1], सुत पितु, सुता श्वसा[2], अवतारी । को अचंभ जहा आप आपके, पुत्र दशा विस्तारी ॥ मत राचो० ॥ २ ॥ घोर नरक दुख ओर न, छोर न लेश न सुख विस्तारी । सुरनर प्रचुर विषयजुर जारे, को सुखिया संसारी ॥ मत राचो० ॥ ३ ॥ मंडल[3] है आखंडल[4] छिनमें, नृप कृमि[5], सधन भिखारी । जा सुत विरह मरी है वाघिनि, ता सुत देह विदारी ॥ मत राचो० ॥ ४ ॥ शिशु न हिताहितज्ञान तरुन उर, मदनदहन[6] परजारी । वृद्ध भये विकलांगी थाये, कौन दशा सुखकारी ? ॥ मत राचो० ॥ ५ ॥ यौं असार लख छार भव्य झट, भये मोखमगचारी । यातैं होउ उदास दौल अब, भज जिनपति जगतारी ॥ मत० ॥ ६ ॥

१२३.

नित पीज्यौ धीधारी, जिनवानि[7] सुधासम[8] जानके, नित पी० ॥ टेक ॥ वीरमुखारविंदतैं[9] प्रगटी, जन्मजरागद[10] टारी । गौतमादिगुरु-उरघट व्यापी, परम सुरुचि-करतारी ॥ नित० ॥ १ ॥ सलिलसमान[11] कलिलमलगं[12]-

---

१ स्त्री । २ वहिन । ३ कुत्ता । ४ देव । ५ लट । ६ कामाग्नि । ७ जैनशास्त्रोंको । ८ अमृतसमान । ९ महावीरस्वामीके मुखकमलसे । १० रोग । ११ जलके समान । १२ पापरूपी मैलको नष्ट करनेवाली ।

जन बुधमनरंजनहारी । भंजन विभ्रमधूलि प्रभंजन, मिथ्याजलदनिवारी ॥ नित पी० ॥ २॥ कल्यानकतरु उपवनधरिनी, तरनी भवजलतारी । बंधविदारन पैनी छैनी, मुक्तिनसैनी सारी ॥ नित पी० ॥ ३ ॥ स्वपरस्वरूप प्रकाशनको यह, भानुकला अविकारी । मुनिमन-कुसुदिनि-मोदन-शशिभा, शमसुखसुमनसुवारी ॥ नि० ॥ ४ ॥ जाको सेवत वेवत निजपद, नशत अविद्या सारी । तीनलोकपति पूजत जाको, जान त्रिजगहितकारी ॥ नित० ॥ ६ ॥ कोटि जीभसौं महिमा जाकी, कहि न सके पविधारी । दौल अल्पमति केम कहै यह, अधमउधारनहारी ॥ नि० ॥ ६ ॥

१२४.

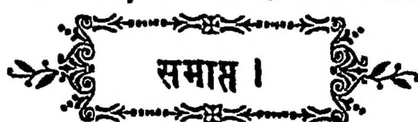
मत कीज्यौ जी यारी, घिनगेह देह जड़ जानके, मत की० ॥ टेक ॥ मात-तात-रज-वीर जसौं यह, उपजी मलफुलवारी । अस्थिमाल पलनसाजालकी, लाल लाल जलक्यारी ॥ मत की० ॥ १ ॥ कर्मकुरंगथलीपुतली यह, मूत्रपुरीषभँडारी । चर्ममँड़ी रिपुकर्मघड़ी

१ "मगलतरुहिं उपावन धरनी" ऐसा भी पाठ है । २ नौका । ३ कर्मबंध । ४ तीखी छैणी । ५ मुनियोंकी मनरूपी कुमोदिनीको प्रफुल्लित करनेकेलिये चन्द्रमाकी रोशनी । ६ समता-रूपी सुख ही हुआ पुष्प, उसकेलिये अच्छी वाटिका । ७ जानते वा अनुभवते हैं । ८ तीन भुवनके राजा इन्द्रादिक । ९ वज्रधारी इन्द्र । १० घृणाका घर । ११ हाड़ मॉस नसोंके समूहकी । १२ कर्मरूपी हरिनोंको फँसानेवाली जगहपर पुतलीके समान । १३ विष्ठा ।

धन, धर्म चुरावनहारी ॥ मत कीज्यौ० ॥ २ ॥ जे जे पावन वस्तु जगतमें, ते इन सर्व बिगारी । स्वेद[1]मेद[2]कफक्लेद[3]मयी बहु, मदगदव्यालपिटारी[4] ॥ मत की० ॥३॥ जा संयोग रोगभव तौलों, जा वियोग शिवकारी । बुध तासौं न ममत्व करैं यह, मूढ़मतिनको प्यारी ॥ मत की० ॥ ४ ॥ जिन पोषी ते भये सदोषी, तिन पाये दुख भारी । जिन तप ठान ध्यानकर शोषी[6], तिन परनी शिवनारी ॥ मत की० ॥ ५ ॥ सुरधनु[7] शरदजलद[8] जलबुदबुद, त्यौं झट विनशनहारी । यातैं भिन्न जान निज चेतन, दौल होहु शमधारी[9] ॥ मत की० ॥ ६ ॥

१२५.

जाऊं कहां तज शरन तिहारे ॥ टेक ॥ चूक अनादितनी या हमरी, माफ करो करुणा गुन धारे ॥ १ ॥ डूबत हों भवसागरमें अब, तुम बिन को मुह वार निकारे ॥ २ ॥ तुम सम देव अवर नाहिं कोई, तातैं हम यह हाथ पसारे ॥ ३ ॥ मोसम अधम अनेक उधारे, बरनत हैं श्रुत शास्त्र अपारे ॥ ४ ॥ "दौलत" को भवपार करो अब, आयो है शरनागत थारे ॥ ५ ॥



---

१ पसीना । २ चरवी । ३ दुख । ४ मदरोगरूपी सापके लिये पिटारी । [illegible] । ६ क्षीण की । ७ इन्द्रधनुष । ८ शरदऋतुके बादल । [illegible]के धारी ।

भजनोंकी पुस्तकें।

जैन पदसंग्रह प्रथमभाग-दौलतरामजीके १२५ पद ।=)

जैन पदसंग्रह द्वितीयभाग-भागचन्दजीके ९० पद ।)

जैन पदसंग्रह तृतीयभाग-भूधरदासजीके ८० पद ।-)

जैन पदसंग्रह चतुर्थभाग-द्यानतरायजीके ३२३ पद ॥=)

जैन पदसंग्रह पंचमभाग-बुधजनजीके २४३ पद ।=)

माणिक विलास माणिकचन्दजीके १२५ पद ।)

जैन भजनसंग्रह नयनसुखदासजीके १६४ पद ।=)

वृन्दावन विलास वृन्दावनजीकृत पद विनतियों आदि बहुतसी बातोंका संग्रह .... ॥।)

नोट—हमारे यहां सब जगहके छपे हुए सब प्रकारके जैनग्रन्थ हर समय मिलते है। एक कार्ड लिखकर बड़ा सूचीपत्र मंगाकर देखिए।

पता—

श्रीजैनग्रन्थरत्नाकर कार्यालय.

हीराबाग, पो० गिरगांव—बंबई।